गांधी जी का जन्तर

तुम्हें एक जन्तर देता हूं। जब भी तुम्हें सन्देह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तो यह कसौटी आजमाओ

जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शकल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुंचेगा? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा? यानि क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा सन्देह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।

मो० क० गांधी

नेहरू के अमर विचार

सम्पादक
मुल्कराज आनन्द

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

नवम्बर 1988
कार्तिक 1910

P.D. 18T—PD

प्रकाशन सहयोग

सी०एन०राव, अध्यक्ष, प्रकाशन विभाग

प्रभाकर द्विवेदी, मुख्य सम्पादक	यू. प्रभाकर राव, मुख्य उत्पादन अधिकारी
दिनेश सक्सेना, सम्पादक	डी. साई प्रसाद, उत्पादन अधिकारी
नरेश यादव, सम्पादन सहायक	प्रमोद रावत, उत्पादन सहायक

मूल्य
1.00 रुपया

प्रकाशन विभाग में, सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली 110016 द्वारा प्रकाशित तथा एन.के. एन्टरप्राइजेज़, 4782/2-23, दरियागंज, नई दिल्ली 110002 में मुद्रित।

प्राक्कथन

प्रस्तुत पुस्तक द्वारा हम राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् की एक नई पुस्तक-माला का शुभारम्भ कर रहे हैं। इसका नाम है 'कमल पुस्तक-माला'। इसके अंतर्गत इतिहास, विज्ञान, कला, संस्कृति, भारत और विश्व की सम सामयिक समस्याओं एवं महान पुरुषों तथा स्त्रियों के जीवन चरित्रों पर कम कीमत वाली पुस्तकें उपलब्ध करा कर हम किशोरों एवं युवाओं को ज्ञान-सरोवर के दर्शन कराएँगे। इस पुस्तक-माला के प्रेरक डाक्टर मुल्कराज आनन्द हैं जिन्होंने इस पुस्तक को तैयार किया है एवं और भी पुस्तकें निर्माणाधीन हैं। इस पुस्तक-माला की रचना में हमें प्रोफेसर दौलतसिंह कोठारी जैसे अनेक विख्यात विद्वानों एवं शिक्षाविदों की सहायता मिली है।

'जवाहरलाल नेहरू के अमर विचार' द्वारा पंडित नेहरू के व्यक्तित्व और विचारों की एक झलक उन्हीं के शब्दों में हम युवा पाठकों को दे रहे हैं। भारतीय जनता की कई पीढ़ियों की चेतना को ढालने में महात्मा गांधी के बाद जवाहरलाल नेहरू का ही योगदान रहा है। शोषण से मुक्त एक नए भारत के निर्माण के लिए और साम्राज्यवाद के उत्पीड़न से मुक्त एक नए विश्व के सृजन के लिए उन्होंने भारत के लोगों की आकांक्षाओं को वाणी दी। स्वाधीन भारत के प्रथम प्रधानमंत्री के रूप में, आधुनिक भारत के स्वतंत्र विकास की दिशा भी उन्होंने ही निर्धारित की।

लगभग चार दशकों की अवधि में फैले जवाहरलाल नेहरू के विशाल वाङ्मय में से एक प्रेरक चयनिका डाक्टर मुल्कराज आनन्द ने तैयार की है। इसके लिए परिषद् उनकी आभारी है। इस पुस्तक-माला की समानांतर अंग्रेज़ी की 'लोटस सीरीज़' की पुस्तकों का अपार स्वागत हुआ है। आशा है प्रस्तुत पुस्तक भी लोगों को पसंद आएगी।

पी.एल. मल्होत्रा
निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

नई दिल्ली
नवम्बर 1988

आमुख

स्वाधीन भारत के प्रथम प्रधानमंत्री और महान स्वतंत्रता सेनानी की रचनाओं के बड़े-बड़े ग्रंथ पुस्तकालयों में मिलते हैं। इन पुस्तकालयों तक सभी लोगों की पहुँच नहीं है। ऐसे ही लोगों के लिए यह छोटी सी पुस्तक प्रकाशित की जा रही है जिसमें जवाहरलाल नेहरू के अमर विचारों को संकलित किया गया है।

यह चयनिका कुछ अज्ञात संकलनों और सम्पादक की अपनी पढ़ाई से तैयार की गई है। मुख्य रूप से यह किशोर और युवा पाठकों के लिए है। जवाहरलाल नेहरू के बुनियादी विचारों से यह उन्हें परिचित कराएगी। इसे पढ़ कर पाठक बड़े संकलनों को पढ़ने के लिए प्रेरित होंगे।

जवाहरलाल नेहरू के वाङ्मय की महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि उसमें एक क्रियाशील व्यक्ति के विचार हैं। उन्होंने यह बात महात्मा गांधी से सीखी थी कि 'विचार' और 'क्रिया' को कैसे जोड़ा जाए कि कथनी और करनी का एकीकृत दृष्टांत लोगों को मिल जाए।

हमारा देश अभी भी संस्थापक नेताओं की परम्परा में काम कर रहा है। अतएव राजनीतिक आज़ादी में सन्निहित अनेक आज़ादियों को हासिल करने के लिए, जो हम अभी तक नहीं पा सके हैं, नवजवानों को इन विचारों और पूर्वजों के विचारों को कार्य रूप में परिणत करना होगा। ऐसा करने पर ही पंडित नेहरू के विचार नई पीढ़ियों के लिए प्रासंगिक बन सकेंगे।

और आज तो उन्हें पढ़ना और भी ज़रूरी हो गया है क्योंकि उनके अनेक विचार एवं उनके प्रभाव उत्तराधिकारियों द्वारा भुला दिए जा रहे हैं।

कमल पुस्तक-माला इन विचारों को नई पीढ़ी को समर्पित कर रही है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के प्रति सम्पादक आभारी है।

लोकायत
हौज़ खास गाँव
नई दिल्ली

मुल्कराज आनन्द

भारतीय युवाओं से

पीठ सीधी, नज़र आसमान की ओर उठी हुई, कदम दृढ़ता के साथ ज़मीन पर गड़े हुए। सीना तानकर खड़े रहो और भारतीय जनता का एकीकरण तथा संगठन करो।

विचार

विचारों में योद्धाओं से भी अधिक शक्ति होती है। विचार सशस्त्र सेना से भी महान् हैं। हो सकता है, विचारों का आरंभ कमज़ोर, दुर्बल तथा प्रभावहीन हो किन्तु उनका परिणाम निश्चय शक्तिमान, प्रभावशाली तथा सुदृढ़ होता है।

मेरा बचपन

हमारे पिता साक्षात् क्रोध की मूर्ति थे। किन्तु सौभाग्यवश अपनी तीव्र विनोद बुद्धि तथा फ़ौलाद जैसी दृढ़ इच्छा-शक्ति के कारण वे अपने आपको संयत कर सकते थे।

उनके कोप की एक पुरानी याद आज भी मेरी स्मृति में तरोताज़ा है, क्योंकि मैं स्वयं उनके क्रोध का शिकार बन गया था। मेरी आयु पाँच-छः साल की रही होगी। एक दिन मैंने उनके आफिस-टेबुल पर दो नए पेन देखे। बड़ी ललचाई नज़रों से मैं उनकी तरफ देखता रहा। मैंने अपने आपसे तर्क किया, भला पिताजी को एक साथ दो-दो पेनों की क्या आवश्यकता हो सकती है। अतः मैंने उनमें से एक पेन उड़ा लिया। बाद में मैंने देखा कि उस गुमशुदा कलम की बड़ी ज़ोर-शोर से तलाश हो रही है। मेरे तो छक्के छूट गए पर मैंने अपना गुनाह कबूल नहीं किया। पेन मिल गया और मेरा अपराध जाहिर हो गया। पिता का क्रोध सातवें

आसमान पर पहुँच गया और उन्होंने मेरी अच्छी खासी धुनाई की। पीड़ा और अपमान से मैं जैसे अंधा हो गया। लज्जित होते हुए मैं माताजी के पास भागा। बहुत दिनों तक मेरे कँपकँपाते शरीर पर तरह-तरह के मलहम लगाए जाते रहे।

लेकिन इस कड़ी सज़ा के कारण मेरे मन में अपने पिता के बारे में किसी प्रकार की दुर्भावना नहीं पैदा हुई। इस के बारे में मैंने यही सोचा कि यह एक न्यायोचित सज़ा थी। हाँ, उसमें आवश्यकता से अधिक सख्ती ज़रूर बरती गई थी। लेकिन अपने पिता के बारे में मेरे मन में पूर्ववत प्रशंसा तथा प्रेम का भाव बना रहा। हाँ, उस भाव में थोड़ा डर भी शामिल हो गया। माता जी के बारे में ऐसी कोई बात नहीं थी। उनसे मैं ज़रा भी नहीं डरा करता था क्योंकि मुझे पूरा विश्वास था कि मेरी हर ग़लती वे माफ़ करेंगी और उनके इस लाड़-प्यार के कारण मैं उन पर थोड़ा सा हावी होने की कोशिश करता रहता था।

दोहरा प्रभाव

शायद वह एक त्रिकोण था--गांधी जी, मेरे पिता और स्वयं मैं। हर कोई एक दूसरे को कुछ सीमा तक प्रभावित करने में लगा रहता था। किंतु मेरे विचार में गांधी जी एक विस्मयजनक योग्यता के अधिकारी थे, अपने दोस्ताना अंदाज़ से वे विरोधियों का सारा जोश ठंडा कर दिया करते थे। इसमें कोई आक्रामक भाव न होते हुए भी यह एक प्रभावी मार्ग था। ज़रूरी बातें मनवाने में उन्होंने कभी हार नहीं मानी। साथ ही उन्होंने किसी भी महत्वपूर्ण बात में सिद्धांतों का सौदा नहीं किया। गांधी जी की महानता को पिता जी ने स्वीकार किया। उसी से पहले हमें स्थिति का आभास हो गया। दूसरी बात यह है कि उनके निकट सान्निध्य के कारण हमें ज्ञात हो गया कि, गांधीजी न केवल एक महान् और अत्युत्तम व्यक्ति हैं, बल्कि वे अत्यंत प्रभावी भी हैं। यह बात तो ज़ाहिर हो गई थी कि उनकी कार्य-प्रणाली मूर्खतापूर्ण नहीं थी। उसके अच्छे परिणाम दुनिया के सामने आ रहे थे।

गांधी जी के प्रति आदरभाव तथा उनकी कथनी के पीछे जो सुसंगत तर्क तथा तथ्य होता था उनका सम्मिश्रण धीरे-धीरे मेरे पिता में परिवर्तन ले आया। उनके अन्तस की यह परिवर्तन प्रक्रिया प्रदीर्घ तथा पीड़ादायक थी। किन्तु जब एक बार उन्होंने ठान लिया तो उनका जीवन पूरी तरह बदल गया।

मेरे भीतर भी एक महान् परिवर्तन हो रहा था। मैं तो अल्पवयस्क था और गांधी जी मेरे ऊपर पूरी तरह से छा गए थे। मेरे विचार में उनके संबंध में मेरा तथा पिता का पहला अनुभव पंजाब में ज़ारी किए मार्शल लॉ के ज़माने का था। हम सब मिलकर काम कर रहे थे। मैं एक प्रकार से गांधी जी के सचिव की हैसियत से काम कर रहा था। परिस्थितियों को समझने की गांधी जी की क्षमता हमें बार-बार हैरान किया करती थी। समय का तकाज़ा वे भली-भाँति जानते थे कि किस समय क्या करना चाहिए। प्रारम्भ में हम लोगों में से अधिकांश उनका विरोध किया करते। हम पूछते 'इससे भला कौन सा परिणाम निकलने वाला है?' कुछ समय पश्चात् हमें पता चलता कि गांधी जी द्वारा बताई गई नीति ही सही नीति है। अतः धीरे-धीरे हम उनके निर्णय पर, और उनके सिद्धांतों पर, भरोसा करने लगे।

राष्ट्रपिता

इस विद्वेषपूर्ण, आत्यंतिक हिंसा भरी तथा अणु बम जैसे विस्फोटक तथा विनाश की ओर ले जाने वाले साधनों से परिपूर्ण दुनिया में सद्भावना का यह शांतिदूत एक विरोधाभासी तथा चुनौतीपूर्ण व्यक्तित्व लेकर आया है। अपनी हवस मिटाने के लिए पागलपन की धुन पर नित्य नए-नए उपकरण तथा बिलासिता की सामग्री ढूँढ़ने वाले अत्यंत लालची समाज में वे केवल एक धोती तथा झोंपड़ी के साथ खुश रहते थे। धन, शक्ति और अधिकार लिप्सा की इनसानी दौड़ में वे अडिग रहा करते थे, फिर भी अधिकार उनकी शांत किंतु दृढ़ निगाहों में झलकता था। शक्ति उनकी अति सामान्य दुबली-पतली काया में भरी हुई थी और वहीं से अन्यत्र फैलती थी।

कहाँ से इतनी ऊर्जा, शक्ति, तथा अधिकार पाया था उन्होंने? क्या किसी गुप्त झरने से जीवनामृत पी करके उन्होंने युगयुगान्तर से भारत को शक्ति प्रदान की थी? नम्रता तथा आत्माभिमान के साथ महात्मा गांधी ने अपनी जनता में धीरे-धीरे शौर्य, धैर्य, अनुशासन, सहनशक्ति तथा किसी काम के लिए सहर्ष-आत्मयज्ञ करने की मानसशक्ति भर दी थी।

हमारे देश ने एक शक्तिमान महात्मा को जन्म दिया, जिसने न केवल भारत बल्कि संपूर्ण विश्व को एक दीपस्तंभ की तरह पथ प्रदर्शन प्रदान किया।

एक नई आवाज़

गुलामी की जंजीर की कसावट कम होने की बजाय जुल्म की मात्रा अधिकाधिक बढ़ने लगी। इन बिलों की आधारशिला थी एक कमिटी की रिपोर्ट जिसे रोलेट बिल नाम से जाना जाता था। लेकिन चंद दिनों में ही ये बिल संपूर्ण देश में 'ब्लैक बिल' नाम से कुख्यात हो गए। प्रत्येक भारतीय उनकी बुराई करने लगा। इन बिलों ने सरकार तथा पुलिस को भरपूर अधिकार दिलवाए। अब पुलिस किसी को भी बिना किसी मुकदमें के पकड़कर जेल में बंद कर सकती थी, अथवा किसी भी व्यक्ति पर गुप्त रूप में मुकदमा दायर कर सकती थी। उस ज़माने में इन बिलों का वर्णन, इन शब्दों में प्रसिद्ध था–'ना वकील ना अपील ना दलील'। इन बिलों के विरुद्ध होने वाला आक्रोश बुलन्दी पर आने ही वाला था, कि इतने में राजनीति के क्षितिज पर एक नया घटक एक छोटा सा बादल प्रकट हुआ और उसने वायुवेग से भारतीय आकाश को आच्छादित कर लिया।

इस नए अनोखे घटक का नाम था––मोहनदास करमचंद गांधी। युद्ध काल में वे दक्षिण अफ्रीका से लौटे थे और साबरमती में अपनी बस्ती में एक आश्रम में आबाद हो गए थे। उन्होंने अपने आपको राजनीति से दूर रखा था। उन्होंने युद्ध के लिए फौज़ में आदमी भरती करने में भी सरकार का हाथ बँटाया था। दक्षिण अफ्रीका में चलाए हुए अपने सत्याग्रह आंदोलन के कारण वे भारत में मशहूर हो गए थे। सन् 1917 ई० में बिहार के चंपारन जिले के यूरोपियन बगीचे वालों के पैरों तले निर्दयता के साथ कुचली जाने वाली रैयत को बचाने में उन्होंने कामयाबी हासिल की थी। उसके पश्चात् वे गुजरात में कैरा नामक गाँव के समस्त किसानों के पीछे दृढ़ चट्टान बन खड़े रहे। सन् 1919 ई० के प्रारंभ में वे सख्त बीमार पड़ गए। वे संपूर्ण रूपेण स्वस्थ हुए भी नहीं थे। इतने में देशव्यापी रोलेट बिल आंदोलन शुरू हुआ। उन्होंने भी इस सार्वजनीन आक्रोश में अपनी आवाज़ मिलाई।

लाठी चार्ज का अनुभव

......कायरता और वीरता के बीच एक पतली सी रेखा थी। मैं उनमें से कुछ भी बन सकता था। मैंने निश्चय किया ही था कि मैंने चारों ओर दृष्टि घुमाई और देखा कि एक घुड़सवार पुलिस का सिपाही अपनी नई लाठी भाँजते हुए धीमे-धीमे मेरी तरफ बढ़ रहा था। मैंने उसे इशारा किया, 'आगे बढ़ो' और अपना सिर और मुख बचाने के लिए अपना सिर परे हटाया -- यह तो एक सहज प्रयत्न था। उसने मेरी पीठ पर दो बड़े जोरदार वार किए। मैं तो हक्का-बक्का हो गया। मेरे पूरे बदन में कँपकँपी दौड़ने लगी। लेकिन विस्मय की तथा समाधान की बात यह थी कि मैंने अभी भी अपने आपको पाँव पर खड़े हुए पाया। मैं धराशायी नहीं हुआ था। इसके बाद तुरन्त पुलिस फोर्स हटाया गया और हमारे सामने का रास्ता बंद कर दिया गया। हमारे स्वयंसेवक फिर से इकट्ठे हो गए। उनमें से अनेक लोगों के बदन से खून बह रहा था, अनेक लोगों के सर फूट गए थे। पं० गोविन्द बल्लभ पंत और उनके साथी हममें शामिल हो गए। उनकी भी अच्छी खासी पिटाई हो चुकी थी। हम सब पुलिस की ओर मुखातिब होकर नीचे बैठे हुए थे। इस तरह हम घंटों बैठे रहे, अंधेरा छा गया। एक तरफ अनेक वरिष्ठ अधिकारी जमा हो गए। जैसे ही यह बात फैली, दूसरी ओर बड़ी भारी भीड़ इकट्ठा होने लगी। अंत में अधिकारियों ने हमें अपने पहले मार्ग से जाने की अनुमति दे दी और हम उस रास्ते से चले गए। जिन पुलिस वालों ने हम पर लाठी हमला करके हमारी अच्छी खासी मरम्मत की थी, वे ही घुड़सवार पुलिस वाले हमारे संरक्षक के रूप में हमारे आगे-आगे चलने लगे।

वीर नायक

वीर नायक को किसी के सामने अपना शीश झुकाने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। हाँ, उसके प्राण लिए जा सकते हैं। इस तरह के शूरवीर अल्पसंख्या में हो सकते हैं और उन्ही में अपने देश का संपूर्ण वातावरण बदलने की क्षमता होती है।

जेल डायरी

खटमल, मच्छर एंड कंपनी के साथ मेरा धर्मयुद्ध अखंड ज़ारी था। हमारा जेल बाहर से साफ़सुथरा नज़र आता था किंतु बंदियों को तथा उनके कपड़े, कंबल साफ़ करने का ज़रा सा भी प्रयास नहीं किया जाता था।

18 अगस्त, वीरवार 1932

ओफ ओ ! कैसा है यह जीवन ! वही कोल्हू के बैल की जिंदगी। एक दिन में दूसरे दिन से रत्तीभर भी अन्तर नहीं। कभी कभार भोजन चूक जाया करता था -- और हमारे लिए तो यह एक आम बात हो गई थी -- फिर भी यही एक उल्लेखनीय प्रसंग समझा जाता था। और ढेर सारी पुस्तकें-- जिन्दगी की तमाम उकताहट तथा नैराश्य से छुटकारा पाने के लिए भला इनके सिवा दूसरा कौन सा उपाय हो सकता था?

....आज मेरी मनोदशा अजीब सी हो गई थी-- जी चाहता था-- स्मृतियों के आँचल में लिपटा रहूँ। सुबह से इन्दु का विचार मेरे मन में प्रबल रूप में आया था, उससे मेरा मन व्याप्त था। उसके शारीरिक विकास की विभिन्न अवस्थाएँ मैंने देखी थीं, किंतु न जाने मेरा मन उसके वर्तमान किशोरी रूप से अधिक उसके नन्हीं मुन्नी गुड़िया जैसे बालिका रूप की छवि ही निहार रहा था। और उसे देखने की ललक मेरे मन में तीव्र रूप धारण करने लगी ...।

उससे मेरी अन्तिम मुलाकात दो महीने और एक सप्ताह पहले हुई थी। अब मुलाकात न होने की मुझे आदत सी हो चुकी थी। मैंने मुलाकातों की प्रतीक्षा करना ही छोड़ दिया था। जो अन्तहीन है उसकी भला कोई कैसे प्रतीक्षा कर सकता है? जिस दिन कोई मुलाक़ात होती उसी दिन से दूसरी की प्रतीक्षा शुरू हो जाती। दिन गिनना शुरू हो जाता है-- 13, 12, 11, 10, ... लेकिन अब ऐसी प्रतीक्षा नहीं है। ऐसी गिनती भी नहीं रही। अपने आपको किसी साँचे में ढालना, किसी बात का आदी बनाना कितना आसान है।

और फिर भी मन को बेचैन करने वाला एक घटक रह गया-- पन्द्रह दिन में घर से आने वाली चिट्ठी। मैं पहले से अधिक उत्सुकता के साथ उसकी प्रतीक्षा करने लगा। अब मुलाकातें बंद हो चुकी थीं। मैं दिन गिनता था, यदि निश्चित दिन में चिट्ठी नहीं आती तो मुझे चिन्ता सताने लगती। चिट्ठी बुधवार को आनी चाहिए थी। पिछली बार न बुधवार को आई न वीरवार को, कहीं कमला की

तबियत तो खराब नहीं है? अखबार की चन्द पंक्तियों से इस बात की सूचना भी मिल चुकी थी, इससे मेरा मन अधिक व्याकुल हो गया था। अन्त में शुक्रवार को चिट्ठी आई और मेरा भय सच निकला। लेकिन चिट्ठी आ जाने से अधिक कुछ कहने, करने की आवश्यकता नहीं थी और चिन्ताग्रस्त होते हुए भी मन को एक प्रकार की शांति प्राप्त हो गई।

फिर आज वीरवार है, और अभी तक कोई पत्र नहीं आया।

यदि मुलाकातों की तरह पत्रों का आना भी बिल्कुल रुक जाए तो मुझे पूरा विश्वास है कि इस बात का भी मैं आदी हो जाऊँगा। तब कोई इन्तज़ार नहीं करना होगा। यह ज़रा कठिन बात है-- शायद मैं अधिक कठोर, उग्र और चिड़चिड़ा बन जाऊँगा और तब बेचारे मेरे साथी दुःखी होएँगे।

इतिहास का सही अर्थ

क्या इतिहास का अर्थ राजाओं, महाराजाओं व सम्राटों की लम्बी नामावलि रटना है? नहीं, नहीं, मेरे विचार से किसी देश के संपूर्ण इतिहास की यह कल्पना अब मृतप्राय हो चुकी है। मैं यकीनन तो नहीं कह सकता कि सभी भारतीय विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में इस कल्पना का अस्तित्व है या नहीं। किन्तु मैं आशा करता हूँ कि किसी भी कीमत पर यह परम्परा समाप्त होनी चाहिए क्योंकि विभिन्न राजाओं-महाराजाओं के शासन तथा युद्ध-संधि आदि बातों का पूरा लेखा-जोखा रखने से अधिक निरर्थक बात बच्चों की पढ़ाई में और कौन सी हो सकती है।

इतिहास का एक दूसरा पहलू आज अधिक सामने आता है। वह है इतिहास का सामाजिक पक्ष। सामान्य मनुष्य के दैनंदिन जीवन में सामाजिक रचना के विकास का अनुसंधान बहुत ही निकट रूप से संबंधित है। हो सकता है सैंकड़ों-हज़ारों साल पुराने किसी पारिवारिक जमा-खर्चे का ब्यौरा मिल जाए, तो उसमें ऐसी सैकड़ों-हज़ारों बातें हो सकती हैं, जो इस बात का कुछ अन्दाज दे सकती हैं कि उस प्राचीन काल में मानव जीवन किस प्रकार का था। और केवल तभी हम इतिहास के शुष्क अस्थिपंजर को जीवन, खून तथा मांस के वस्त्र पहनाकर सजा सकते हैं।

अन्त में, मेरे विचार में दुनिया में जिन समस्याओं का हमें सामना करना होता है उन सबको एक या दो वाक्यों में बताया जा सकता है। वे सभी संबंधों की समस्याएँ होती हैं। व्यक्ति का समूह से संबंध, समूहों के आपसी संबंध। तकरीबन हर राजनीतिक, सांस्कृतिक अथवा व्यक्तिगत समस्या केवल एक वाक्य में संक्षिप्त की जा सकती है। और धीरे-धीरे बदलने वाले ये संबंध समाज की संरचना को सार्थक बना देते हैं और अंत में हमारे चारों और फैले हुए राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को भी सार्थक बना देते हैं।

इतिहास की सामाजिक दृष्टि

वास्तविक इतिहास का संबंध इधर-उधर के चंद व्यक्तियों के साथ नहीं होना चाहिए। जिन लोगों के परिश्रम तथा प्रयासों के कारण राष्ट्र बनता है, जीवन की आवश्यकताओं तथा सुविधाओं की सामग्री तैयार होती है और जो हजारों प्रकार की विधियों से एक दूसरे पर क्रिया-प्रतिक्रिया करते रहते हैं ऐसे लोगों के साथ ही इतिहास का संबंध होता है। वास्तव में मनुष्य का इस प्रकार का इतिहास एक दिलचस्प, रोचक तथा आकर्षक कहानी है। वह मनुष्य के संघर्षों की कहानी है। उन संघर्षों की कहानी जो मनुष्य और प्रकृति के बीच, मनुष्य और जंगली जानवरों के बीच तथा शोषण करने वाले मनुष्यों और दबाए गए मनुष्यों के बीच युगों से होते आए हैं। यह मनुष्य के जीवन संघर्ष की कहानी है।

जैसे-जैसे आर्थिक तथा सामाजिक घटकों की मात्रा बढ़ने लगी, वैसे-वैसे जीवन अधिकाधिक जटिल बनने लगा। यातायात, व्यापार बढ़ने लगा। नजरानों का स्थान विनिमय लेने लगा। उसके पश्चात् आ गया द्रव्य यानी पैसा। उससे सभी विनिमय व्यवहारों में ज़मीन आसमान का परिवर्तन आ गया। सभी व्यवसायों में वृद्धि हो गई क्योंकि सोने तथा चांदी के सिक्कों से मूल्य चुकाने के कारण अदलबदल करने में सुविधा हो गई। इसके बाद हमेशा सिक्कों का भी प्रयोग नहीं किया गया, लोग चिन्हों का प्रयोग करने लगे। एक कागज़ के टुकड़े पर पैसे देने का लिखित रूप में वचन देना पर्याप्त समझा जाने लगा। इस तरह हुंडियों और चेकों का जन्म हुआ। इसका अर्थ यह हुआ कि एक दूसरे पर

विश्वास रखकर उधार का व्यवहार चलने लगा। यह उधार व्यवहार उद्योग, धंधों के लिए अत्यंत लाभदायक सिद्ध हो गया। जैसा कि आप जानते हैं, आजकल चेकों तथा बैंक नोटों का ही अधिक प्रयोग होता है और विवेकी लोग अपने साथ सोने चांदी की जोखिम उठाना पसन्द नहीं करते।

इस तरह हम देखते हैं कि धुँधले अतीत से निकल कर इतिहास प्रगतिशील हो गया। उत्पादन अधिकाधिक मात्रा में बढ़ने लगा। लोगों ने व्यवसाय की विभिन्न शाखाओं में विशेषता प्राप्त की, वे एक दूसरे के साथ अपने अपने उत्पादन का लेन-देन करने लगे। इस तरह व्यापार में वृद्धि होती रही। हम यह देखते हैं कि स्टीम इंजन के आगमन के बाद गत सौ सालों में यातायात के नित्य नए साधन उपलब्ध हो रहे हैं। उत्पादन-वृद्धि के साथ विश्व की सम्पत्ति भी बढ़ेगी। चलो, कम से कम कुछ लोग तो ऐशोआराम की जिन्दगी गुजारेंगे और जिसे संस्कृति कहा जाता है उसका विकास होगा।

किसी भी परिवर्तन को लोगों के मन बहुत ही धीमी गति के साथ स्वीकार करते हैं-- यही है इतिहास की एक त्रासदी।

हमारा वैदिक उत्तराधिकार

वेदों में ऋग्वेग अग्रणी है। शायद मानव जाति के पास यह पहली पुस्तक होगी। इसमें मानवी मन का पहला उद्रेक है, कविता का तेज, निसर्ग की सुंदरता का आह्लाद और रहस्यवाद है।

लेकिन स्वयं ऋग्वेद के पीछे सिंधु संस्कृति, मेसोपोटामिया की संस्कृति तथा अन्य संस्कृतियों के विकासकाल का सांस्कृतिक अस्तित्व तथा विचार है। अतः ऋग्वेद में हमारे पहले पथ प्रदर्शक, दृष्टा, पूर्वजों के प्रति जो समर्पण भाव है वह उचित ही है।

कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ टैगोर के शब्दों में ये ऋग्वेदीय मंत्र लोगों की 'अस्तित्व के प्रति, आश्चर्य और कृतज्ञता, भय, विस्मय आदि भावनाओं की संकलित प्रतिक्रिया का काव्यात्मक वसीयतनामा' है। संस्कृति के उषः काल में जीवन में सूचित होने वाले अविरत रहस्य के प्रति समाज की सरल किंतु आवेशपूर्ण प्रतिभा जागृत हो गई।

लेकिन वह चिन्तनशील प्रवृत्ति धीरे-धीरे आगे बढ़ी, अन्त में वेद ने पुकारा, "हे विश्वास, हमें श्रद्धा का दान दे दो," और आगे 'विधाता का गीत' नामक एक मंत्र में अधिक गहन प्रश्न उठाए गए हैं। मैक्स मुल्लरने इस गीत को शीर्षक दिया है–– 'अज्ञात ईश्वर के प्रांते'।

1. तब वहाँ न कोई अनस्तित्व था न कोई अस्तित्व। वहाँ न कोई वातावरण था, न उसके आगे आकाश। उसे किसने आच्छादित किया और कहाँ ? किसने आश्रय दिया ? क्या वहाँ जल था ? जल राशि की अगाध गहराई थी ?
2. तब मृत्यु का अस्तित्व नहीं था, एक भी वस्तु चिरस्थायी नहीं थी, कोई चिह्न नहीं था, न दिन और रात का विभाजन। वही एक वस्तु साँस-रहित थी, स्वयं अपनी प्रकृति से साँस ले रही थी।
3. तमस था वहाँ, प्रथम सब कुछ अंधकार में विलीन था, यह सब कुछ एक अभेद्य उलझन थी। जो अस्तित्व में था वह शून्य तथा निराकार था। तपस की महान शक्ति के प्रभाव से उस आशंका का जन्म हुआ।
4. उसके पश्चात् आरंभ में इच्छा की उत्पत्ति हुई। इच्छा, चैतन्य का आद्य बीज। जिन ऋषियों ने अपने अन्तस् की विचारधारा से अनुसंधान किया, उन्होंने अनस्तित्व में अस्तित्व का संबंध ढूंढ़ लिया।
5. उनकी सीमारेखा निरर्थक रेखा से विस्तृत हो गई, क्या है उसके आगे ? क्या है उसके नीचे ? वहाँ स्रष्टा भी है, और शक्तिमान साधन भी। यहाँ उन्मूलन कृति है और वहाँ असीम् शक्ति है।
6. सत्य ही कौन जानता है और यहाँ कौन घोषित करता है ? कहाँ से इसकी उत्पत्ति हुई और कहाँ से यह सृष्टि हुई ? देवताओं का सृजन तो इस विश्व की उत्पत्ति के बाद हुआ, फिर कौन जानता है कि पहले कहाँ से अस्तित्व में आया वह।
7 "वह", इस सृष्टि का आद्य जनक, इसने यह निर्माण किया या नहीं ? सर्वोच्च स्वर्ग में जिनकी आँखें इस सृष्टि का नियंत्रण करती हैं सत्य ही उसे ज्ञात है अथवा अज्ञात भी है।

महाकाव्य, इतिहास, परंपरा और पुराण

अपने बचपन की पहली स्मृतियों में, अपनी अम्मा के मुख से अथवा घर की बड़ी-बूढ़ी औरतों से सुनी हुई रामायण-महाभारत की कहानियाँ आज भी तरोताज़ा हैं। जिस तरह अमरीका या यूरोप का बच्चा परी-कथाएँ या साहस की कथाएँ सुनता है उसी तरह हम रामायण-महाभारत की कथाएँ सुना करते थे। मेरे लिए उनमें साहस और कौतूहल दोनों मौजूद थे। खुले रंगमंच पर की जाने वाली रामलीला दिखाने प्रति वर्ष मुझे ले जाया जाता था। यह रामलीला देखने के लिए तथा जुलूस में भाग लेने के लिए बड़ी भारी भीड़ एकत्र हुआ करती था। यह सब था तो बड़ा बचकाना, किन्तु इससे क्या अंतर पड़ता है क्योंकि ये कथाएँ हर किसी को याद थीं और वह एक आनंदोत्सव था।

शाश्वत अतात

अपनी आदत के अनुसार आज भी मेरी नींद तब खुल गई जब आसमान में अभी तक सितारे चमचमा रहे थे। भोर होने से बिल्कुल पहले वातावरण में जो विलक्षणता आ जाती है, उसी से कोई भी अनुमान लगा सकता है कि अब उषः काल होने ही वाला है और जैसे ही मैं पढ़ने बैठ गया, दूर से आती हुई आवाज़ें तथा प्रतिक्षण बढ़ती हुई खड़खड़ाहट से प्रातःकाल की शांति भंग हुई। मुझे याद आया कि आज संक्रान्ति का दिन है, माघ मेले का पहला बड़ा दिन। हजारों यात्री प्रातःकालीन स्नान के लिए संगम की ओर जा रहे थे। संगम एक ऐसा स्थान है जहाँ गंगा का जमुना से मिलन होता है और कहा जाता है कि लुप्त सरस्वती भी वहीं उन से मिलती है। चलते-चलते वे गा भी रहे थे और कभी-कभी नारे भी लगा रहे थे– गंगा माई की जय ! और नैनी जेल की दीवारें फांद कर उनकी आवाज़ें मेरे कानों तक आ पहुँचीं। उन आवाजों को सुनकर मैं सोचने लगा–– श्रद्धा की महिमा कितनी अगाध है। उनकी श्रद्धा ही तो उन्हें कुछ काल के लिए अपनी गरीबी तआ दुःख दर्द भुलाकर यहाँ इतनी विशाल संख्या में खींच लाई।

आज वर्षानुवर्ष से, शायद सैकड़ों, हज़ारों वर्षों से ये यात्री त्रिवेणी की ओर आते रहे हैं। मनुष्य का आना-जाना तो चलता रहेगा। राज्य व साम्राज्य कुछ काल तक शासन करते रहेंगे और फिर अतीत में खो जाएँगे किंतु प्राचीन परम्पराएं पीढ़ी दर पीढ़ी चलती रहेंगी। परम्पराओं में बड़ी अच्छाइयाँ होती हैं। लेकिन कभी-कभी वे एक भारी बोझ बनकर हमारे रास्ते में बाधा बन जाती हैं। इस अटूट श्रृंखला के बारे में सोचना बड़ी दिलचस्प बात है। यह हमें सुदूर तथा धुंधले अतीत के साथ जोड़ती है। आज से 1300 वर्ष पहले के मेले का ब्यौरा पढ़ने के लिए यह प्रेरित करती है। किन्तु इस श्रृंखला में एक दोष भी है– हमारी आगे बढ़ने की इच्छा के विरुद्ध यह श्रृंखला हमें रोके रखती है। यह बात ठीक है कि हमें अतीत की कड़ियों को भूलना नहीं चाहिए लेकिन जब कभी यह प्राचीन परम्परा हमारी प्रगति का रोड़ा बन जाये तो उसकी कैद को हमें तोड़ना ही होगा।

विविधता में एकता

मेरा ख्याल है कि हम सब के पास अपने देश की भिन्न-भिन्न तस्वीरें हैं और किन्हीं भी दो व्यक्तियों के विचारों में बिल्कुल एक जैसी समानता नहीं होगी। जब मैं भारत के बारे में सोचता हूँ तो मेरे सामने अनेक तस्वीरें उभरती हैं– छोटे-छोटे अनगिनत गाँवों से भरे हुए विस्तीर्ण मैदान, मेरे देखे हुए गाँव और शहर, बरखा रानी के जादुई स्पर्श की संजीवनी से शुष्क रूप त्यागकर चमचमाता हराभरा सौंदर्य धारण करने वाली भूमि; महानदियाँ और बहता हुआ जल; अपने चारों ओर सर्द मायूसी का नकाब ओढ़े खड़ा हुआ खैबर दर्रा; भारत का वह दक्षिणी किनारा; व्यक्ति और समष्टि के रूप में भारतीय जनता के विविध रूप; हिम का ताज पहने खड़ा भारत का सरताज हिमालय; वसंत ऋतु में नए-नए फूलों से ढकी कश्मीर की कोई पर्वतीय घाटी। अपनी अपनी पसन्द की तस्वीरें चुनकर हम उन्हें सजा सकते हैं। इसीलिए मैंने उष्ण कटिबंधीय देश की गर्मी की बजाय पर्वतीय भूमि की तस्वीर का चुनाव किया है। दोनों तस्वीरें सही हैं क्योंकि भारत विषुवत रेखीय उष्ण कटिबंधीय प्रदेशों से लेकर एशिया के शीतलतम प्रदेश तक अपने पाँव पसारे है।

हम सब चाहे किसी भी धर्म के अनुयायी व ां न हों, भारत की संतान हैं और समान रूप से अपने अधिकारों और सुविधाओं को भोगते हैं और कर्तव्यों का पालन करते हैं।

नियति से भेंट

काफी साल पहले नियति से हमारी भेंट हुई थी। अब वह समय आ गया है– जब हम पूर्णरूपेण तो नहीं लेकिन किसी सीमा तक वचनमुक्त हो रहे हैं। मध्यरात्रि के समय जब सारी दुनिया गहरी नींद में सोई होगी, तब हिंदुस्तान जाग उठेगा और स्वाधीन भारत का जन्म होगा । अब वह क्षण आ गया है जब हम पुरानों को त्यागकर नए कदम रख रहे हैं। एक युग का अन्त हो रहा है, काफी अर्से से अत्याचार से दबी हुई हमारे देश की आत्मा अब मुखर हुई है। इतिहास में ऐसे महत्वपूर्ण क्षण कभी कभार ही आते हैं। ऐसे उदात्त, गंभीर क्षण में यह उचित है कि हम भारत की तथा भारतीय जनता की, उससे भी अधिक विस्तृत अर्थ में मानवता की सेवा के लिए समर्पित होने की दृढ़ प्रतिज्ञा करें।

इतिहास के उषःकाल के समय भारत ने अपनी अनंत यात्रा शुरू की और कितनी ही पथविहीन सदियाँ उसके प्रयासों तथा सफलता की भव्यता और असफलता से भर गईं। चाहे सौभाग्य काल हो चाहे दुर्भाग्य काल, भारत ने न तो अपनी खोज का कार्य रोका और न ही अपने आपको शक्ति देने वाले आदर्शों को कभी भूल सका। आज हमारे दुर्भाग्य का अन्त हो गया है और भारत ने अपने आपको पुनः पा लिया है। आज हम अपनी जिस कामयाबी का उत्सव मना रहे हैं वह तो सुनहले भविष्य के द्वार तक पहुँचाने वाली एक सीढ़ी मात्र है। क्या हम इतने शूरवीर तथा चतुर हैं कि इन स्वर्णावसरों का लाभ उठा सकें? क्या भविष्य की चुनौती हमें स्वीकार है?

आज़ादी और शक्ति के साथ जिम्मेदारी भी आ जाती है। यह जिम्मेदारी भारत की जनता का प्रतिनिधित्व करने वाली इस समिति पर है। आज़ादी से पूर्व हमने कितने कष्टों को झेला है और उनकी स्मृति मात्र से हमारे दिल बोझिल बन गए हैं। उनमें से कुछ दुःख हम अभी भी उठा रहे हैं। फिर भी अतीत पीछे चला गया है और हमें अब केवल भविष्य की पुकार सुननी है।

हमारा भविष्य सहज, व आरामदायी नहीं है, बल्कि उसमें भी सतत संघर्ष है। इस संघर्ष की सहायता से ही हम प्रतिज्ञाएँ लेते आए हैं और आज भी लेने वाले हैं। भारत की सेवा का अर्थ है लाखों करोड़ों दुखी लोगों की सेवा। भारत की सेवा का अर्थ है उसका दारिद्रय, अज्ञान, बीमारी और विषमताओं का अन्त करना। हमारी पीढ़ी की सबसे महान विभूति की यही महत्वाकांक्षा है-- प्रत्येक आँख के आँसू पोंछ डालना। हो सकता है, यह कार्य हमारी शक्ति के बाहर हो, लेकिन जब तक ये आँसू और दुःख अस्तित्व में हैं, हमारा कार्य समाप्त नहीं होगा।

अतः हमें कष्ट सहना है, डटकर काम करना है, अपने सुनहरे सपनों को साकार करना है, उन्हें हक़ीकत में बदलना है। ये सपने भारत के हैं, लेकिन ये संपूर्ण विश्व के लिए हैं क्योंकि आज सभी राष्ट्र और उनके निवासी एक दूसरे के इतने निकट आ गए हैं कि कोई भी राष्ट्र अलग-थलग रहने की कल्पना भी नहीं कर सकता। शांति, स्वाधीनता, संपन्नता अब अविभाज्य घटक हैं। उसी तरह यह ''वसुधैव कुटुम्बकम'' विश्व किसी भी कारण विभाजित होकर एकाकी नहीं हो सकता। हम भारत वासियों से उनके प्रतिनिधि के रूप में बिनती करते हैं कि इस महा अभियान में आस्था तथा विश्वास के साथ हमें सहयोग दें। किसी क्षुद्र विनाशकारी आलोचना का यह समय नहीं है। किसी भी प्रकार का बैर भाव अथवा एक दूसरे पर दोषारोपण करने का भी यह समय नहीं है। हमें सावधान भारत का एक ऐसा भव्य प्रासाद खड़ा करना है, जहाँ उसकी सारा संतानें सुख शांति के साथ रह सकें।

लोकतंत्र

लोकतंत्र अनुशासन, सहिष्णुता और एक दूसरे की इज्ज़त करने की भावना पर आधारित है। आज़ादी दूसरों की आज़ादी की ओर सम्मान की दृष्टि से देखती है।

लोकतंत्र पूर्णरूपेण राजनीतिक मामला नहीं है। लोकतंत्र का अर्थ है सहिष्णुता – न केवल अपने मत वाले लोगों के बारे में सहिष्णुता बल्कि अपने विरोधियों के प्रति भी सहिष्णुता। आज़ादी के आगमन के साथ-साथ हमें अपने व्यवहार का ढांचा इस प्रकार बदलना चाहिए ताकि वह इस आज़ादी के साथ मेल खा सके।

वर्तमान युग में उपनिवेशवाद अथवा साम्राज्यवाद सँपूर्णतः अनुचित लगता है। यह एक अपमानजनक तथा लज्जास्पद पंथ है। घटनाएँ एक अविश्वसनीय रफ्तार के साथ आगे बढ़ती हैं। परिवर्तन के पीछे परिवर्तन होते हैं। नीति का यह ऊपर ऊपर का उथला स्वरूप अनगिनत गलतियों को छिपाता है और चीज़ों का स्वरूप बिगाड़ता है।

जनता से अलग होने वाली सरकार कभी लोकप्रिय नहीं बन सकती। जहाँ तक मेरा संबंध है, मैंने न कभी सरकारों को गिराने की कामना की थी न ही उन्हें गिराने के प्रयत्न किए थे।

लोकतांत्रिक शासनप्रणाली केवल चुनाव की बात नहीं है। लोकतंत्र का सही अर्थ होना चाहिए विषमता का उन्मूलन। यही पर्याप्त है। सही अर्थ के लोकतंत्र में अनुशासनबद्धता स्वयं प्रेरित होती है। जहाँ अनुशासन नहीं, वहाँ लोकतंत्र नहीं रह सकता।

संसदीय लोकतंत्र में अनेक गुण अपेक्षित हैं। अर्थात् उसे सबसे पहले सक्षम होना चाहिए। कार्य के प्रति निश्चित रूप में श्रद्धा होनी चाहिए, आस्था होनी चाहिए। इसमें विशाल मात्रा में सहयोग की भावना होनी चाहिए। आत्म अनुशासन होना चाहिए। लोकतंत्र में हमें इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि सम्मान के साथ हार जीत कैसे अपनाते हैं। हाँ, लोकतंत्रात्मक शासनप्रणाली की प्रशंसा तथा प्रेम के बावजूद मैं इस बात से सहमत नहीं हूँ कि बहुसंख्यक लोग हमेशा सही होते हैं।

अधिकार और कर्त्तव्य

हम देखते हैं कि अधिकार पर मर्यादा से अधिक जोर दिया जाता है और कर्त्तव्यों पर बहुत कम। यदि कर्त्तव्यों की जिम्मेदारी स्वीकार कर ली जाए तो अधिकार स्वतः ही मिल जाएंगे।

संसद

हमारे यहाँ संसद है जहाँ हम एक दूसरे के साथ अपने-अपने विचारों पर चर्चा करके किसी निर्णय पर पहुँचने का प्रयत्न करते हैं। क्या संसद को ताला लगाकर हम भूख हड़ताल कर किसी निर्णय पर पहुँच सकते हैं? इसका यही अर्थ है कि जो सबसे अधिक समय तक भूख हड़ताल जारी रख सकता है उसकी विजय होगी, वह अपनी मांगें पूरी करवा सकता है। यह न लोकतंत्र है न ही कुछ और। यह पूर्णतया गलत तरीका है।

हम ही भारत की संसद हैं और हमें ही असंख्य जटिल गंभीर समस्याओं का सामना करना है। संसद में इस तरह का नाटकीय हंगामा हमें मंहगा पड़ सकता है। यहाँ खड़े रहकर मछली बाजार के नारे लगाना भी हमें शोभा नहीं देता। हमें एक महत्वपूर्ण जिम्मेदारी सौंपी गई हैं।

सरकार को अपने वक्तव्य और उन्हें प्रमाणित करने वाले सबूतों को सोच-समझ कर पेश करना चाहिए। जब तक सरकार अपने वक्तव्यों का न्यायोचित स्पष्टीकरण देकर संपूर्ण विश्वास नहीं दिलाती तब तक उसे जनता अथवा राष्ट्रों को तिरस्कृत करने का कोई अधिकार नहीं है।

यदि जनता गलत रास्ते पर जाती है, तो कोई उपाय नहीं।

सरकार सर्वोच्च न्यायालय को किसी नीति का हवाला नहीं देती। संसद और सरकार दोनों को ही आपस में विचार विनिमय करके अपनी नीति निश्चित करनी चाहिए।

विरोधी पक्ष की भूमिका

बहस के दौरान किसी विरोधी के खिलाफ एकाध शब्द बोलकर उसे पराजित करना और उसके दिलो-दिमाग तक पहुँचने का प्रयास न करना, अपने मन को झूठी तसल्ली देना है।

वे पूछते हैं नेहरू को दूसरों की आलोचना करने का क्या अधिकार है जब वह स्वयं बरसों से एक ही पार्टी की सरकार के साथ कुर्सी पर चिपका बैठा है? सच

पूछो तो यह एक पार्टी की सरकार वाली बात मेरी समझ में नहीं आती। क्या वे चाहते हैं वैकल्पिक पार्टियों का शासन हो? या वे चाहते हैं कि अपने विरुद्ध काम करने के लिए हम लोगों को रिश्वत दें? भई मेरी तो समझ में कुछ नहीं आता। इसमें तो तर्कहीनता तथा उनकी सुप्त भावनाओं का उद्रेक ही नज़र आता है।

विपक्षी पार्टी के लोग तथा हमारे कुछ कांग्रेसी भाई न केवल कांग्रेस की असफलता तथा गलतियों पर टीका-टिप्पणी करना चाहते हैं बल्कि राष्ट्र तथा देश को नीचा दिखाने की भी उनकी प्रवृत्ति है।

आज की हमारी इस विचित्र दुनिया में सवालों की झड़ी लगाने का चलन है। इन सवालों के जवाब देने की कोशिश या तो कोई अक्ल का पुतला या कोई अक्ल का दुश्मन ही कर सकता है। मैं न तो बहुत अक्लमंद हूँ और न ही अक्ल का दुश्मन हूँ। लोकतंत्र में कई गुण हैं– विचार स्वातंत्र्य, चर्चा स्वातंत्र्य, विपक्षी दलों को अपने विचार पूर्ण रूप से प्रकट करने देने के लिए अवसर और उनसे चर्चा करने के बाद सही बातों को मान लेने का वातावरण। हो सकता है कभी-कभी यह वातावरण न हो लेकिन यदि यह सही है तो अंत में प्रचलित होगा ही। लोगों में मतभेद होने से हमेशा समस्या खड़ी होती है चाहे वह उचित हो या अनुचित। समस्याओं के राजनीतिक समाधान के लिए समरूपता के सिद्धांत को लागू करना चाहिए।

कुछ राजनीतिक पार्टियाँ वादी के वकील की तरह कार्य करती हैं। जब उन्हें लगता है कि अपना मुकद्दमा बिल्कुल निराधार है, उसमें कोई दम नहीं, तब वे तर्कों की बजाय गालियों की वर्षा करती हैं।

आलोचना और निन्दा

अगर बहुमत हर समय अल्पसंख्यकों पर अपनी इच्छा थोपने का प्रयास करे तो यह मूर्खता होगी। मतभेद कम करने का केवल एक ही तरीका है कि सहयोग का सुखद वातावरण बनाया जाए। हमारी चाहे जितनी आलोचना हो, हमें हमेशा इस बात को याद रखना चाहिए कि यदि भारत प्रगति कर रहा है, तो वह भारतीय लोगों के कार्य से, न कि भारत सरकार की वजह से।

यदि आप हर बात पर नाक भौं सिकोड़ेंगे तो आपकी नापसंदगी की क़ीमत शून्य होगी। आपको जहाँ उचित है वहाँ उसका श्रेय देना ही चाहिए और जहाँ आवश्यक है वहीं आलोचना करनी चाहिए तभी आपके विचार को महत्व दिया जाएगा।

अनुचित बात का अवश्य विरोध कीजिए। किन्तु किसी प्रकार का वैरभाव न रखिए। सभी लोग मुझे भारत का प्रधानमंत्री कहते हैं, किन्तु अच्छा होगा, यदि मुझे भारत का आद्य सेवक कहा जाए। इस ज़माने में पदाधिकार का कोई महत्व नहीं है, सेवा का महत्व होता है।

व्यक्ति-स्वातंत्र्य

किसी भी लोकतंत्रात्मक समाज पद्धति में व्यक्तिगत स्वतंत्रता की परिकल्पना सामाजिक स्वतंत्रता तथा व्यक्ति के समष्टि के साथ जो संबंध होते हैं उनसे संतुलित होती है। व्यक्ति को चाहिए कि वह दूसरे व्यक्तियों की स्वतंत्रता का उल्लंघन न करे।

स्वतंत्रता की उपेक्षा ख़तरनाक हो सकती है

ऐसा कभी मत सोचिए कि एक बार स्वाधीनता प्राप्त होने से वह निरन्तर आपके पास रहने वाली है। आपकी ज़रा सी उपेक्षा, बेफ़्रिकी अथवा असावधानी हमारी आज़ादी को संकट में डाल सकती है। हमारे इतिहास में इस बात की अनेक बार पुनरावृत्ति हुई है।

धर्म और जाति

हम सब चाहे किसी भी धर्म या जाति के हों, फिर भी अगर भारत का अस्तित्व एक बलशाली तथा स्वायत्त राष्ट्र के रूप में बना रहता है तो वह हम सबके लिए कल्याणकारी है।

समय की गति के साथ हममें धर्म के नाम पर संकीर्णता पनपती गई। कैसा है यह धर्म जो इन्सान के इन्सान से मिलने में रुकावट बनता है? धर्म के नाम पर समुद्र यात्रा को भी एक घोर पाप समझा जाता है।

धर्म के कारण समाज में भेदभाव लाना बहुत उथलापन है। आज की दुनियां में सभी राष्ट्र केवल दो समूहों में विभाजित हैं–– अमीर और गरीब। मेरे विचार में अन्य कोई विभाजन हो ही नहीं सकता।

जहाँ तक धर्म का सवाल है, मेरे विचार में मूल विवाद को ढकने के लिए केवल एक बहाना मात्र बनाने के लिए इसे उठाया जाता है।

पवित्रता अच्छी चीज़ है। मैं सदाचारी मनुष्यों के सामने हमेशा नतमस्तक होता हूँ। लेकिन मैं अभी तक यह नहीं समझ सका कि पवित्रता का संबंध सामाजिक कुरीतियों के साथ क्यों जोड़ा जाता है। यह मेरी समझ के बाहर है।

हम सब धार्मिकता और एक प्रकार के आधुनिकतावाद तथा प्रतिक्रियावाद के मिश्रण हैं। कितनी विचित्र बात है कि जहाँ कभी कभी हम ढिंढोरा पीटते हैं कि हमें अपना जीवन बदलना चाहिए, वहीं हम पुरानी लकीर के फकीर बने फिरते हैं, गली-सड़ी मृत रूढ़ियों को गले लगाते हैं।

जातीयता का अभिशाप नष्ट करना होगा। क्योंकि जातीयता के आधार पर न लोकतंत्रात्मक समाज खड़ा है न समाजवाद।

धर्म निरपेक्षता का अर्थ धर्महीनता नहीं है

हमारे संविधान में भारत को एक धर्मनिरपेक्ष राज्य के रूप में घोषित किया गया है। इसका मतलब यह नहीं कि वह अधार्मिक है, नास्तिक है। धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र

का अर्थ सभी धर्मों को समान रूप में सम्मानित किया जाना तथा प्रत्येक मनुष्य को चाहे वह किसी भी धर्म का अनुसरण करता हो – समान अवसर देना है।

समाजवाद

अपने चारों ओर हम जिस प्रकार का जीवन देखते हैं वह बहुत ही जटिल है।

कुछ मूर्ख लोग सोचते हैं कि धन अपने आपमें ही बहुत अच्छी चीज़ होती है। इसीलिए वे उसे एकत्रित करते हैं और उसका उपयुक्त रीति से उपभोग करने की बजाय उसे संचित करते रहते हैं।

बढ़ती हुई सम्पत्ति तथा उत्पादन से उपेक्षित किए गए समाजवाद का अर्थ होगा –– गरीबी को समान रूप से बांटना अर्थात गरीबी को फैलाना। हमें सम्पत्ति का उत्पादन करना चाहिए और बाद में उसे समान रूप में विभाजित करना चाहिए।

सब लोगों को आप एक समान नहीं बना सकते, न ही सभी को एक ही तराजू में तोल सकते हैं। किंतु कम से कम हमें उन्हें समान अवसर तो देना ही पड़ेगा।

मैं साम्यवाद (कम्यूनिज्म) के खिलाफ नहीं हूँ। न ही मैं समाजवाद के खिलाफ हूँ। हाँ, असल बात यह है कि –– मैं केवल भारत के लिए हूँ।

ग़रीबी हटाओ

गरीबी, बेरोजगारी, अवनति और गुलामी को दूर करने के लिए समाजवाद के सिवाय कोई रास्ता नहीं है। इसका मतलब हमारी सामाजिक व राजनीतिक संरचना में क्रांतिकारी परिवर्तन है।

द्रव्यार्जन करो और समान रूप में बाँट दो

गरीबों में कुछ धनवान लोगों की सम्पत्ति का बँटवारा करने से हमारे राष्ट्रीय उत्पादन में कुछ अन्तर नहीं पड़ेगा। हमें द्रव्यार्जन करना चाहिए और फिर उसका समान रूपेण बँटवारा करना चाहिए।

चींटी मनुष्य से श्रेष्ठ है

यदि आपसी सहयोग और बहुजन हिताय बहुजन सुखाय के लिए स्वार्थत्याग ही संस्कृति की कसौटी है तो हम यह कह सकते हैं कि दीमक और चींटी इस मामले में मनुष्य से श्रेष्ठ हैं।

मुझे बिना वर्ग तथा जाति का समाज चाहिए

धर्म, जाति, भाषा, प्रांत के नाम पर आज संकुचित दायरे में संघर्ष चल रहा है। मैं चाहता हूँ वह तुरन्त बंद हो और एक ऐसे वर्गहीन तथा जातिहीन समाज की रचना हो जहाँ हर व्यक्ति को अपनी-अपनी शक्ति तथा योग्यता के अनुसार अपना विकास करने का अवसर प्राप्त हो।

सहिष्णुता

सहिष्णुता का अर्थ है दूसरे के विचारों को बर्दाश्त करने की शक्ति। सहिष्णुता मन की एक अवस्था है। यह दुनिया एक बहुरंगी तथा बहुढंगी स्थान है। इसीलिए सहिष्णुता की अत्यंत आवश्यकता होती है।

भावात्मक एकता

केवल राजनीतिक एकता का विचार करना ही पर्याप्त नहीं है। हमें उससे भी अधिक गहराई तक जाना चाहिए। हमारे पास ऐसी भावात्मक एकता होनी चाहिए जो प्रांतीय, जातीय, धर्मीय प्रतिबंधों को दूर कर सके। तभी हम सच्चे अर्थ में घोषित कर सकेंगे – एक हृदय हो भारत जननी।

बालक क्या जाने जग के बंधन

दुनिया में विभिन्न प्रकार की विषमताएँ होती हैं – धर्म, जाति, वर्ण, पक्ष, राष्ट्र, प्रांत, भाषा, रीति, रिवाज, अमीरी, गरीबी, इत्यादि। सौभाग्य से बच्चों को एक दूसरे से अलग कर देने वाले इन सामाजिक बंधनों की अधिक जानकारी नहीं होती। वे अपने में मस्त रहते हुए एक दूसरे के साथ खेलते हैं, एक दूसरे के साथ व्यवहार करते हैं। जब वे बड़े हो जाते हैं तभी उन्हें अपने बड़ों से इन सामाजिक बंधनों, सामाजिक विषमताओं का ज्ञान होता है।

एक राष्ट्र

भारत में प्राचीन काल से ही अनेक धर्म वाले लोग बड़े प्रेमपूर्वक रहते आए हैं। आज भी उन धर्मों का उतना ही सम्मान और आदर किया जायेगा, किंतु एक राष्ट्रीय दृष्टिकोण के साथ। अपने ही दायरे में रहने वाला कूपमंडूक वृत्ति का राष्ट्रवाद हम कभी नहीं अपनाएंगे। किन्तु कुछ अंशों में एक प्रकार का सहिष्णु, क्रियात्मक, राष्ट्रीय दृष्टिकोण अपनाएंगे, जिसका अपने आप पर तथा अपने लोगों की अलौकिक बुद्धिमत्ता पर पूरा-पूरा भरोसा हो और जो एक अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था की स्थापना में अपना पूरा-पूरा सहयोग दे रहा हो।

अतीत के प्रति दृष्टिकोण

भारत को काफी हद तक अपने अतीत का त्याग करना होगा और उसे अपने वर्तमान पर हावी होने देने से बचना होगा। हमारा जीवन अतीत के बोझ के नीचे दबा हुआ है। जो मृत है, जिसका कार्य पूरा हो चुका है, उन सब बातों को दूर करना होगा। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि अतीत में जो महत्वपूर्ण और जीवनदायी है उसका भी त्याग करना चाहिए। अपने परंपरागत आदर्श हम कभी नहीं भूल सकते। सदियों से चले आए भारतीय लोगों के सुनहरे सपने, हमारा प्राचीन ज्ञान, हमारे पूर्वजों का जीवन तथा प्रकृति के प्रति उत्साह, उमंग और प्रेम, उनकी जिज्ञासु वृत्ति, मानसिक तथा वैचारिक साहस, साहित्य, कला, संस्कृति में उनका अपूर्व योगदान, सत्य, शिव और सुंदरम, स्वतंत्रता के प्रति उनका प्रेम, उनके अपनाए हुए मूलभूत तत्व, जीवन की रहस्यमय प्रवृत्तियों के संबंध में उनकी ग्रहणशक्ति, अपने से अलग विभिन्न विचार प्रणालियों को सहन करने की उनकी शक्ति, अन्य लोगों और उनके सांस्कृतिक गुणों में समरूपता दिखाने की उनकी क्षमता, उनसे सहानुभूति दिखाकर एक विविधरंगी मिश्र संस्कृति निर्माण करने की उनकी योग्यता इत्यादि बातें भला कोई कभी भुला सकता है?

यदि अतीत के किसी युग में सत्य के एक रूप को तत्वों के आधार पर पाषाणवत् जड़ बना दिया गया हो, तो मानवता की बदलती आवश्यकताओं का

विकास होना रुक जाएगा। सत्य के दूसरे पहलू प्रकाश में नहीं आ पाएंगे और वह आने वाले किसी भी युग के आवश्यक प्रश्नों का उत्तर देने में असमर्थ रहेंगे। यह अब शक्तिशाली, जोरदार नहीं रहा, बल्कि स्थिर हो गया। यह जीवनदायी प्रेरणा नहीं रहा, बल्कि मृत हो गया। यह बात सत्य है कि संभवतः उस हद तक उसे समझा नहीं गया होगा जितना उस अतीत में – जब उसका विकास हुआ था और उसे उस युग की भाषा तथा संकेतों से सजाया गया – समझा गया था। क्योंकि अगले युग में उसका संदर्भ विभिन्न हो सकता है। मानसिक वातावरण में परिवर्तन आ गया। नए सामाजिक रस्मो रिवाज विकसित हुए और कई बार उस प्राचीन लेख का अर्थ समझ पाना टेढ़ी खीर हो गया।

अतीत, वर्तमान और भविष्य

सुना है, इतिहास से हमें बहुत कुछ शिक्षा मिलती है। ऐसा भी कहा जाता है कि इतिहास स्वयं अपने आपको कभी नहीं दोहराता। दोनों बातें बिलकुल सही हैं क्योंकि यदि हम इतिहास के दास बनकर उसका अंधानुकरण करने का प्रयास करें तो हम इतिहास से कुछ भी नहीं सीख सकेंगे। न हम इस बात की अपेक्षा कर सकते हैं कि उसकी अपने आप पुनरावृत्ति हो या उसका एक ही स्थान पर स्थिर संचय हो। किंतु हम उसके पीछे उसके बारे में पूछताछ करके उसे चलाने वाली शक्तियाँ खोज सकते हैं। इतनी खाक छानकर भी हमें शायद ही कोई सीधा उत्तर मिलता है। कार्ल मार्क्स कहते हैं, 'इतिहास के लिए कई प्रश्न उपस्थित करने के अलावा पुराने प्रश्नों का उत्तर पाने के लिए अन्य कोई रास्ता नहीं है।'

सुकरात के युग की तरह हम जिज्ञासा के युग में रह रहे हैं। किंतु वह जिज्ञासा केवल एथेन्स जैसे एक शहर के लिए ही मर्यादित थी। अब यह संपूर्ण विश्व में फैली हुई है।

जीवन कितना समृद्ध, विविध रंगों से विभूषित, बहुढंगी है। यद्यपि इसमें कई दलदल, कई कीचड़ युक्त स्थान हैं फिर भी इसमें महासागर, ऊँचे-ऊँचे पर्वत, बर्फ, हिमनदियाँ और सितारों से जगमगाती हुई सुंदर रातें, अपने परिवार तथा मित्रों का अटूट स्नेह, किसी समान हेतु प्रीत्यर्थ एकत्रित होने वाले कामगारों का

निश्छल भाईचारा, संगीत, पुस्तकों और कल्पनाओं का अंबार, प्रतिभा का विशाल साम्राज्य है। इसीलिए हममें से प्रत्येक व्यक्ति कह सकता है--

"हे ईश्वर। यद्यपि मैं इस धरती माता की संतान के रूप में इस धरती पर रहता हूँ फिर भी सितारों से जगमगाते हुए इस आकाश की मुझ पर पितृछाया है।"

विचारों को न्याय देने के लिए कार्य रूप में परिणत करना होगा। जग प्रसिद्ध तत्ववेत्ता रोम्या रोलाँ कहते हैं, 'कृति विचार का अंत है।' जो विचार क्रियान्वयन तक नहीं पहुँचता वह एक प्रकार की भ्रूणहत्या अथवा विश्वासघात है। यदि हम विचारों के दास हैं, तो हमें कर्म का भी दास बनना होगा।

भारतीय संस्कृति

एक प्राचीन देश होने के नाते हमें बहुत लाभ हुए हैं, साथ ही हानियाँ भी हुई हैं।

भारत में हमारा एक कदम आधुनिक जगत में है तो दूसरा कदम प्राचीन अतीत में रखा हुआ हैं।

भारत केवल निकटतम अतीत का ही नहीं, देश की हज़ारों वर्ष पुरानी कहानी का भी परिणाम है। विचार, अनुभव और कृतियों के स्तर के ऊपर स्तर चढ़ने के उपरान्त ही हम उस स्थिति तक पहुँच सके, जैसा हमारा यह वर्तमान रूप है।

भारत में हमें एक बात अवश्य करनी है-- जहाँ तक हो सके मृतपरंम्पराओं का समूल नाश। बहुत हो चुका उनका आधिपत्य। जब भारत मृदुभाषी था, इसका अर्थ यह नहीं कि वह निर्बल था बल्कि उसे दूसरों के प्रति विश्वास था।

भारत ने हर व्यक्ति, हर बात की ओर सहिष्णुता दिखाई है। इसमें पागल लोगों का भी समावेश है-- जी हाँ, इस दुनिया में उनका भी अस्तित्व होता है।

जो लोग संस्कृति की डींग हाँकते है, प्रायः संस्कृति के बारे में उन्हें अल्पज्ञान ही होता है।

हठधर्मिता

जिन लोगों में अथवा जिस देश में, केवल हठधर्मिता की प्रवृत्ति पाई जाती है, उन लोगों की, उस देश की प्रगति होना मुश्किल होता है। दुर्भाग्य की बात है-- हमारा देश और हमारे लोग आजकल बेहद संकुचित और हठधर्मी हो गए हैं।

शिक्षा के बारे में

शिक्षा का उद्देश्य है मनुष्य का मन, उसकी बुद्धि, उसकी आत्मा को मुक्त करना न कि उन्हें परंपरागत ढाँचे में बद्ध करना।

उत्पादक, अनुसन्धानात्मक और जीवनोपयोगी प्रक्रिया

यदि हम अपने पूर्वजों का अनुसरण ही करते रहेंगे तो हमारे देश की कभी उन्नति नहीं हो सकती। उत्पादक, अनुसंधानात्मक तथा जीवनोपयोगी प्रक्रिया ही राष्ट्र को बना सकती है।

मानव प्राणियों का विकास

मानव प्राणी का विकास एक फूल या एक पौधे के समान होता है-- होना भी चाहिए। आप उसे पानी से सींच सकते हैं -- आप उसके विकास में सहायता कर सकते हैं, आप उसे अच्छी मिट्टी दे सकते हैं। उसे खुली, ताजी हवा में या खुले

स्थान पर रख सकते हैं ताकि उसे सूर्य प्रकाश मिल सके। किन्तु उसे अपने आप बढ़ना होगा। आप उसे ज़बरदस्ती बढ़ा नहीं सकते।

विश्वविद्यालय का उद्देश्य–मानवता

विश्वविद्यालय का उद्देश्य है मानवता, मानव हित। विश्वविद्यालय का उद्देश्य सहिष्णुता, तर्क, उन्नति, नई कल्पनाओं का साहस और सत्य की खोज करना है। इतना ही नहीं उच्च ध्येय के प्रति मानव जाति कीउत्तरोत्तरप्रगति करना भी विश्वविद्यालय का उद्देश्य होता है। लेकिन यदि यह विद्या मंदिर, सरस्वती का निवास स्थान स्वयं ही संकुचित हठवाद, पक्षाभिमान, तथा क्षुद्र उद्दिष्टों का घर बना तो भला राष्ट्र की, देश की उन्नति कैसे हो सकती है? अथवा लोगों का आत्मविकास कैसे हो सकता है?

विज्ञान की प्रवृत्ति

सामान्यतः सभी राष्ट्र परिवर्तनशीलता पसन्द नहीं करते। प्रमुखतः मानवप्राणी एक सनातन प्रवृत्ति का प्राणी है। जीवन के कुछ निश्चित मार्गों की उसे आदत सी बन चुकी है। और अगर कोई उनमें परिवर्तन करना चाहे तो उसे अच्छा नहीं लगता। इसके बावजूद परिवर्तन होता रहता है और लोगों को उसे अपनाना होता है। अतीत में भी लोगों ने ऐसा ही किया है।

गति विज्ञान

विज्ञान की प्रगति होने दीजिए, क्योंकि यह अत्यावश्यक है और विज्ञान की प्रगति होगी ही। साथ-साथ कला तथा मानव-जाति के लिए उपयुक्त अन्य शाखाओं का भी विकास होने दीजिए। इन सबके पीछे वह गति विज्ञान, वह शक्तिशाली संदेश तथा वह उत्पादनशीलता, क्रियाशीलता रहने दीजिए। इन सबके बिना व्यक्ति का जीवन उदास तथा नीरस होगा।

मानवता और वैज्ञानिक प्रवृत्ति

मानवता ही ईश्वर का दूसरा रूप है और समाज सेवा ही धर्म है।

आल्बर्ट आइन्स्टाइन कहते हैं, "हमारे इस ऐहिक युग में केवल गंभीर रूप में काम करने वाले वैज्ञानिक ही संपूर्णतः धार्मिक प्रवृत्ति के इन्सान कहलाने लायक हैं।"

विज्ञान मानव-जाति का रक्षक है

"इंजन-ड्राइवर इंजन चला सकता है, इसीलिए वह प्लेटो और सुकरात से अधिक प्रगतिशील तथा अधिक श्रेष्ठ है"-- कितना बड़ा कुतर्क है यह ! लेकिन यह कहना बिलकुल सही है कि स्वयं इंजन प्लेटो के रथ की अपेक्षा चलनशास्त्र की अधिक प्रगतिशील पद्धति है।

आजकल हम बहुत सारी किताबें पढ़ते हैं। मेरे विचार से उनमें से अधिकांश मूर्खतापूर्ण होती हैं। प्राचीन काल में लोग थोड़ी सी किताबें पढ़ा करते थे, मगर वे अच्छी हुआ करती थीं, वे उन्हें पूर्ण रूपेण समझते थे। स्पिनोज़ा एक महान् विद्वान तथा बुद्धिमान यूरोपियन दार्शनिक था। वह सत्रहवीं शताब्दी में

अम्स्टरडम में रहा करता था। कहा जाता है कि उसके ग्रंथालय में साठ से भी कम ग्रंथ थे।

हमें इस बात का पूरा ज्ञान होना चाहिए कि किसी भी विद्या का पूर्ण लाभ उठाने से पहले उसका किस तरह उचित प्रयोग किया जाए। अपनी शक्तिमान कार आगे दौड़ाने से पहले हमें इस बात का संपूर्ण ज्ञान होना चाहिए कि हमें कहाँ जाना है। उसी तरह हमें इस बात का पूरा ज्ञान होना चाहिए कि हमारे जीवन का ध्येय, उद्देश्य क्या है। चतुर बंदर भी कार चला सकता है किंतु वह एक सतर्क, सुरक्षित ड्राइवर नहीं हो सकता।

ज्ञान का क्षेत्र इतना विशाल है कि हर कार्यकर्ता को अपनी-अपनी विद्या का क्षेत्र विशेषज्ञ बनना पड़ता है। कई बार ऐसा होता है कि वह ज्ञान के दूसरे विभागों के संबंध में बिलकुल अनभिज्ञ होता है। इस तरह यद्यपि वह ज्ञान की कुछ शाखाओं का विशेषज्ञ बनता है किंतु अन्य शाखाओं के संबंध में उसे कुछ ज्ञान नहीं होता अतः मानवी उद्योग के संपूर्ण क्षेत्र का उचित तथा संपूर्ण अभिप्राय देने में वह अपने आप को असमर्थ अनुभव करता है।

गणित की सहायता लेकर आइन्स्टाइन ने भौतिकी के कुछ नए मूलभूत नियम ढूंढ़ निकाले। इससे उन्होंने न्यूटन के कुछ नियमों से, जो आज 200 वर्षों तक बिना किसी शंका के स्वीकृत किए गए थे, भिन्न मत प्रकट किया। आइन्स्टाइन ने अपना सिद्धान्त बड़े दिलचस्प तरीके से स्थापित किया था। इस सिद्धान्त के अनुसार प्रकाश का कार्य एक विशिष्ट रूप में चलना है। इसकी परीक्षा सूर्यग्रहण के समय की जा सकती है। जब सूर्य ग्रहण होता है तब ज्ञात होता है कि प्रकाश की किरणें उसी रूप में अपना कार्य करती हैं, अतः गणितीय तर्क की सहायता से निकाला हुआ एक निष्कर्ष प्रत्यक्ष प्रयोग द्वारा सिद्धान्त के रूप में स्थापित किया गया।

यह सिद्धान्त 'सापेक्षता का सिद्धान्त' नाम से प्रसिद्ध हुआ। विश्व के संबंध में विचार करते समय आइन्स्टाइन ने इस बात का अनुभव किया कि समय की कल्पना तथा अवकाश की कल्पना स्वतंत्र रूप से लागू नहीं की जा सकती। अतः उन्होंने दोनों को हटा दिया और दोनों के संयोग से एक नई कल्पना प्रस्तुत की। यही है अवकाश-काल की कल्पना।

एक दूसरा आश्चर्यजनक तथ्य : हमें बताया गया है कि यह विश्व फैलने वाला है। सर जेम्स जीन्स नामक एक गणितज्ञ ने इसकी तुलना एक साबुन के बुलबुले से की है जो बड़ा और बड़ा होता जाता है। यह विश्व इस बुलबुले का

पृष्ठभाग है और बुलबुले के समान दिखाई देने वाला विश्व इतना विशाल है कि उसे पार करने के लिए लाखों प्रकाश-वर्ष लगेंगे।

मैं ईश्वर से नहीं डरता

जी हाँ, मैं ईश्वर से नहीं डरता। मैं ने ऐसा कुछ भी नहीं किया कि ईश्वर से डरने लगूँ। पापी मनुष्य को इस तरह का भय रहता है, वह कृपाभिलाषी रहता है। ईश्वर कोई हौवा तो नहीं, न ही कोई जुल्मी जमींदार है जिससे हर किसी को डरना चाहिए। ईश्वर उसी जगत् की आत्मा है, चेतना है, जिसके हम भी एक अंश हैं।

आस्था का स्वातंत्र्य

प्रत्येक व्यक्ति को आस्था-स्वातंत्र्य तथा अनुष्ठान-स्वातंत्र्य मिलना चाहिए। ....किन्तु जब धर्म स्वार्थ के भेस में आकर लोगों को लूटता है तब वह धर्म नहीं रहता।

धर्म

"धर्म" शब्द में "रेलीजन" से कुछ अधिक अर्थ अभिप्रेत है। "धृ" धातु से "धर्म" शब्द आया है जिसका अर्थ है "धारण करना" (धारयति इति धर्म) यह किसी वस्तु की अन्तर्भूत प्रकृति है, उसके अन्दरूनी अस्तित्व का नियम है। यह एक नीति-शास्त्र की कल्पना है। इसमें नैतिक कानून, सदाचरण और मनुष्य के कर्तव्यों तथा जिम्मेदारियों की भावना आ जाती है।

नए मंदिर, मस्जिद और गुरुद्वारे

आधुनिक युग में मनुष्य मानव जाति के कल्याण के लिए जहाँ काम करता है वहीं सबसे बड़ा मंदिर, मस्जिद तथा गुरुद्वारा है। बताइए, दूसरा कौन सा स्थान अधिक महान् हो सकता है जहाँ हज़ारों, लाखों लोग अपना खून-पसीना बहाकर और प्राणों की बलि देकर काम करते हैं?

भारतीय नारी

मुझे भारतीय नारी पर गर्व है। उनका सौंदर्य एवं लावण्य, उनकी सुशीलता, उनकी छवि, उनकी लजालुता, नम्रता, बुद्धि-चातुर्य और उनकी त्यागमयी प्रवृत्ति से मेरा सिर गर्व से ऊँचा हो जाता है। मेरे विचार से अगर कोई सच्चे अर्थ में भारतीयता का प्रतिनिधि है तो वह भारतीय नारी, न कि भारतीय पुरुष। मुझे उन पर पूरा भरोसा है। उन्हें अपना रचनात्मक विकास करने के लिए अनुमति देने में मुझे तनिक भी भय अथवा हिचकिचाहट नहीं होती।

परिवार-नियोजन

यदि हमारे देश की जनसंख्या वर्तमान जनसंख्या से आधी होती तो, हमारा देश कहीं अधिक प्रगतिशील होता।

आदिवासी

यह बात सरासर झूठ है कि सभी आदिवासी लोग पिछड़े हुए होते हैं। बहुत सारे विषयों में वे आपसे और मुझ से भी अधिक बुद्धिमान होते हैं। उनकी कुछ परम्पराएँ लोकतंत्रात्मक पद्धति की द्योतक होती हैं।

(जवाहरलाल जी ने एक महाविद्यालयी छात्रा के मित्र की बताई हुई कहानी दोहराई। वह छात्रा सिर पर लकड़ी का भार उठाकर अपने घर लौट रही थी। जब उससे पूछा गया– वह ऐसा क्यों कर रही है तो उसने धाराप्रवाह अंग्रेजी में उत्तर दिया कि पिछले दो-तीन सालों से उसके घरवाले बहुत नुकसान उठा रहे हैं क्योंकि जहाँ उसका व्यवसाय चल रहा था वह प्रदेश अब पाकिस्तान के अधिकार में चला गया था अतः व्यवसाय बिलकुल ठप्प हो गया था। इसीलिए वह अपने कॉलेज की छुट्टियों में अपने घरवालों की मदद करने की कोशिश कर रही थी।)

मैं आपसे पूछता हूँ कि भारत में कितने महाविद्यालयी छात्र, न केवल लड़कियाँ किन्तु लड़के भी, अगर उन्हें ऐसी हालत का सामना करना पड़े, तो लकड़ी का बोझ उठाएंगे? मैंने यह मिसाल आपके सामने रखी क्योंकि मुझे उस असमिया लड़की की यह मनोवृत्ति बहुत अच्छी लगी।

आदिवासी लोग आत्मसम्मान के प्रति बहुत ही जागरूक रहते हैं और उन्हें अपनी इज्जत का बहुत ख्याल होता है।

मिल मालिकों से

अगर आप अपने मज़दूरों को यह बात समझाने का प्रयास करें कि देश की उन्नति उनके परिश्रम पर निर्भर है तो वे अपने काम में अधिक रुचि लेंगे। इससे आप जैसे उद्योगपति और मज़दूरों में एक साझेदारी की भावना का निर्माण होगा।

मज़दूर संगठन

मालिक व मज़दूरों के बीच वर्ग-संघर्ष होने से अच्छा है, एक मज़दूर यूनियन की स्थापना करना। इस बात पर मुझे रत्तीभर भी संदेह नहीं कि भविष्य में उद्योग-व्यवसाय में मज़दूरों की भूमिका विकसित होगी।

खासकर जब मिल मालिक हिंसा का आश्रय लेते हैं, तब मज़दूरों का शिकायत करना उचित है। जाहिर है कि मिल मालिकों का इस तरह का आचरण शिष्ट नहीं है। सरकार, उद्योगपति और जनता को चाहिए कि वे मज़दूरों के साथ हमदर्दी का आचरण करें। आपको मानवता के नाते उनके साथ सद्व्यवहार करना चाहिए। इससे उन्हें ज्ञात होगा कि वे भी देश की आर्थिक व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण भाग हैं।

हड़ताल

विश्व का इतिहास इसे मानता है लेकिन हमारे देश की वर्तमान स्थिति में यह तर्क-संगत नहीं है। मज़दूरों को आपस में चर्चा करके अपनी समस्याओं का हल ढूंढ़ने का प्रयास करना चाहिए। अगर उन्हें इसमें सफलता नहीं मिलती तो पंचायत समिति तथा अन्य शांति-प्रस्थापक मंडल तो होते ही हैं। उन्हें इस बात का ख्याल रखना चाहिए कि किसी प्रकार का भी हंगामा देश की आर्थिक संरचना को क्षति न पहुंचाए।

कुटीर-उद्योग

कुटीर उद्योगों पर ज्यादा ध्यान दिया जाना चाहिए। भारत में देश के संपूर्ण संगठित उद्योगों की अपेक्षा हथकरघे के उद्योग में अधिक लोग काम करते हैं। कोई भी लोकतंत्रात्मक शासन प्रणाली का अनुसरण करने वाला देश इन लोगों को दूर नहीं फेंक सकता। केवल अनियंत्रित एकसत्तात्मक शासन प्रणाली ही ज़बरदस्त कीमत पर यह कर सकती है। मेरे विचार में यह बात अनिष्टकारक है।

कर

कर-पद्धति का एक उद्देश्य है–आमदनी में समानता लाना और विषमता कम करना। हमारे देश में भयंकर विषमता है। जाहिर है कि एक आधुनिक सामाजिक दृष्टिकोण ऐसी भयानक विषमता कभी नहीं सह सकेगा।

उद्योगों के मुकाबले कृषि अधिक महत्वपूर्ण है

मैं मानता हूँ कि उद्योग होने चाहिए, इस्पात कारखाने होने चाहिए, यह होना चाहिए, वह होना चाहिए। लेकिन फिर भी मेरा ठोस मन है कि कृषि इन उद्योगों से कई गुना अधिक महत्वपूर्ण है।

श्रमिकों का पारिश्रमिक

उद्योग-व्यवसाय की हालत चाहे जैसी हो, एक श्रमिक को अपना पारिश्रमिक मिलना ही चाहिए। उद्योगपति को अपने मुनाफे का विचार बाद में करना चाहिए।

यदि किसी जिम्मेदार व्यक्ति ने यह पारिश्रमिक नहीं दिया तो वह अपनी दुकान जितनी जल्दी बंद करे, उतना ही अच्छा है।

परिश्रम का सम्मान

यदि अवसर मिला तो मैं अपनी बेटी को एक साल के लिए शिक्षा के तौर पर बिलकुल किसी अन्य मज़दूर की तरह, किसी कारखाने में लगवा दूँगा।

भ्रष्टाचार

....जहाँ सरकार हमेशा प्रथम दर्शनी न्यायसंगत दिखाई देने वाले किसी भी आरोपी की पूछताछ करने के लिए तैयार बैठी रहती है, लोक सेवकों पर ऐसे ही अंधाधुंध तारतम्यहीन हमले किए जाएं तो आमतौर पर उनका तथा जनता का नैतिक धैर्य ढहने लगता है।

दुर्भाग्य से कभी-कभी ग़बन और घपलों के मामले होते हैं। किंतु जितनी रकम का प्रयोग किया गया है उसके एक मामूली घटक का ही वे प्रतिनिधित्व करते हैं, अतः वे उपेक्षणीय ही होते हैं। जिनकी ईमानदारी, सच्चाई तथा निष्ठा पर देश की शासन प्रणाली निर्भर है, उन सरकारी नौकरों पर संदेह प्रकट करना अनुचित है।

सावधानी तो हमेशा बरतनी चाहिए। अपनी तरफ से मैं बार-बार यही यकीन दिलाता हूँ कि ऐसे मामलों की ओर जिनमें कुछ तथ्य हों, अगर सरकार का ध्यान

आकर्षित कराया गया तो उनकी कसकर पूछताछ होगी तथा उनके खिलाफ कार्रवाई भी की जाएगी।

योजना के बारे में

आर्थिक विकास के किसी भी कार्य के लिए योजना अत्यावश्यक है। योजना के साथ संतुलन जुड़ा हुआ है। यह संतुलन उद्योग तथा खेती के बीच, बड़े उद्योग व छोटे उद्योग के बीच, लघु उद्योग, कुटीर उद्योग तआ अन्य उद्योगों के बीच होना चाहिए। इनमें से एक भी गलत निकला तो सारी अर्थ व्यवस्था ताश के पत्तों के मकान की तरह धड़ाधड़ गिर जाएगी। अगर आप कृषि-उद्योग को अपने आप पर छोड़कर केवल उद्योग पर ही अपना ध्यान केन्द्रित करेंगे तो देश को कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। जब तक यहाँ यंत्रों का निर्माण नहीं होता, लोहे तथा फौलाद का यहीं हमारे देश में ही उत्पादन नहीं होता, तब तक औद्योगिक प्रगति होना मुश्किल है।

अन्य देशों ने जो किया, वही हम करें तो कभी-कभी यह लाभदायक होता है। लेकिन कभी उसे न करने से भी हमारा लाभ हो सकता है।

युद्ध के बारे में

आजकल के जमाने में विश्व युद्ध में तटस्थ रहना बड़ा कठिन काम है।

कोई भी व्यक्ति जिसे अंतरराष्ट्रीय मामलों का थोड़ा बहुत ज्ञान हो, जानता है कि अगर हमारा बस चले तो हम किसी भी युद्ध में भाग लेने वाले नहीं। जब अपनी पसन्द का फैसला करने का समय आएगा तब हम उसी का पक्ष लेंगे जिसमें हमारी रुचि हो। बस यहीं मामला खत्म हो जाता है।

यदि कुछ ऐसे व्यक्ति वास्तव में अस्तित्व में हैं, जो सचमुच ही युद्ध चाहते हैं,

ऐसे व्यक्ति अधिक नहीं हो सकते और ऐसे व्यक्ति संपूर्णतः संतुलित विचार के नहीं होते।

आपके मन का वैरभाव दूसरे लोगों के मन के वैरभाव को उकसाता है। यही संघर्ष का रूप ले लेता है, जहाँ कोई हल नहीं होता।

कभी-कभी ऐसा होता है कि, मतभेद इस हद तक पहुँचते हैं कि आप या तो उस देश से संबंध तोड़ लेते हैं या वहाँ एक संघर्ष का निर्माण हो जाता है।

युद्ध में कानून का अस्तित्व नहीं होता। युद्ध के समय कानून शायद ही सत्य तथा निष्पक्ष होता हो।

संघर्ष अनिष्ट हैं लेकिन किसी भी क़ीमत पर नहीं टाले जा सकते। कभी-कभी तो ऐसे टाले जाने वाले संघर्ष खुद ही अधिक महँगे तथा कष्टदायक होते हैं।

दुर्भाग्यवश अगर हालात अधिक खराब हों, तो हमें सशस्त्र मार्ग का सहारा लेना होगा। इसमें कोई गलती नहीं होनी चाहिए।

अगर बात बड़ी हो तो हम इतिहास के किनारे नहीं बैठ सकते। यह बात मेरी समझ में नहीं आती कि किसी बड़ी शक्ति और एक पिद्दी से देश में सैन्य संधि कैसे होती है। मेरे लिए फौजी अर्थ में यह बात निरर्थक है।

कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जो युद्ध चाहते हैं, लेकिन कोई देश युद्ध नहीं चाहता। अगर ऐसा है तो कुछ संधि और युद्ध सामग्री की नीति की कीमत क्या रहेगी ?

आक्रमण चाहे बड़े देश पर हो चाहे छोटे देश पर, उसकी वजह से पूरे विश्व का संतुलन डाँवाडोल होने लगता है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि अनेक बातों में परिवर्तन आना चाहिए किंतु हमें यह कभी नहीं सोचना चाहिए कि यह परिवर्तन युद्ध से होगा। आप युद्ध के द्वारा जो करना चाहते हैं वह कभी नहीं होता बल्कि युद्ध से हानि ही होती है।

अगर आप हाथ में तलवार लेंगे, तो दूसरे भी वही करेंगे। यह बात कोई भी नहीं जानता कि अंत में किसकी तलवार सबसे अधिक तेज़ सिद्ध होगी। अगर किसी ने हाथ में तलवार पकड़ ली तो उसे किसी दूसरे की तलवार का सामना तो अवश्य करना होगा।

तलवारों का यह संघर्ष निष्फल हिंसाचार ही पैदा करता है।

जहाँ स्वाधीनता को धमकाया जाता है, न्याय को डराया जाता है, या आक्रमण होता है, वहाँ न हम तटस्थ रह सकते हैं न रह सकेंगे।

अगर कोई देश इतना मूर्ख हो कि वह स्वयं को युद्ध में झोंक दे, तो आप युद्ध से भाग नहीं सकते। आपको अपनी सर्वशक्ति लगाकर लड़ना होगा और उसे

अन्त तक ले जाना होगा।

हम एक विरोधाभासयुक्त युग में रहते हैं। हम बातें तो शांति की करते हैं लेकिन युद्ध की तैयारी में लगे रहते हैं।

गुट निरपेक्षिता

गुट निरपेक्षिता का अर्थ मन की निष्क्रियता या निश्चित मत का अभाव नहीं है। जिसे हम दुष्ट प्रवृत्ति कहते हैं उसके सामने आत्मसमर्पण करना भी इसका अर्थ नहीं है। हमारे सामने आने वाली समस्याओं को हल करने के लिए यह एक ठोस तथा ज़बरदस्त प्रभावशाली मार्ग है। हमारा विश्वास है कि प्रत्येक देश को न केवल स्वतंत्रता का अधिकार है, बल्कि अपनी नीति तथा जीवन यापन करने का मार्ग निश्चित करने का भी अधिकार है।

किन्तु किसी एक शक्ति के गुट में अपने आपको शामिल करवाने का अर्थ है अपने विचार और अपनी नीति को इसलिए छोड़ देना क्योंकि कोई और चाहता है कि उसकी नीति अपनाई जाए।

वैदेशिक संबंध

जब तक भारत अपनी आर्थिक नीति विकसित नहीं करता तब तक मेरे विचार में वह अपनी वैदेशिक नीति के मार्ग को मंद गति के साथ अंधेरे में ही टटोलता रहेगा। या तो हममें इतनी शक्ति होनी चाहिए जिससे हमारा दूसरों पर कुछ प्रभाव पड़ सके या हमें किसी के मामले में दखलअन्दाजी नहीं करनी चाहिए। हर अंतरराष्ट्रीय मामले में अपना हाथ डालने के लिए मैं उत्सुक नहीं हूँ।

अपने आपको पूरी तरह अलग रखने का अर्थ है मौत और देश का सर्वनाश। प्रत्येक महान् राष्ट्र के लिए चाहे वह कितना भी बड़ा क्यों न हो एकाकी रहने का अर्थ है संपूर्ण दुनिया से संबंध तोड़ना। दूसरे शब्दों में जहाँ सारी दुनिया प्रगति पथ

पर अपनी उन्नति कर रही हो वहाँ पीछे रह जाना।

हम अपना सर्वसामान्य मत प्रकट कर सकते हैं कि हमें कहाँ जाना है और कैसे जाना है।

किसी एक देश के लिए अपनी नीति निश्चित रूप में बनाने से कुछ कठिनाइयाँ पैदा हो सकती हैं।

सदिच्छा कहीं से भी हो, हमारे लिये मूल्यवान है।

हमें हमेशा बाह्य शत्रु अथवा अपनी किसी अन्दरूनी कमजोरी के संबंध में सतर्क रहना चाहिए।

हम अपने अंतरराष्ट्रीय संबंधों का विस्तार कर सकते हैं। हम नये-नये मित्र बना सकते हैं। हाँ यह हमेशा ध्यान में रखना चाहिए कि हम अपने पुराने मित्रों को न भूलें।

हम अन्य राष्ट्रों की स्वाधीनता में दखलअन्दाजी करना नहीं चाहते और हमें यह अपेक्षित है कि दूसरे भी हमारी स्वाधीनता के बारे में यही भावना रखें।

पड़ोसी देशों के साथ संबंध

किसी के दिल को चोट पहुँचाना या किसी से झगड़ा मोल लेना यह हमारा उद्देश्य नहीं है।

मेरी अपने पड़ोसियों के प्रति सहिष्णुता तथा उनकी मेरे प्रति सहिष्णुता का प्रश्न तभी उठता है जब हममें मतभेद हों।

एशिया और अफ्रीका में जीहजूरी नहीं

एशिया तथा अफ्रीका में जीहजूरी नहीं चलेगी। यह सब काफी हो चुका है। हम महान् राष्ट्रों की मित्रता की कद्र करते हैं किंतु हम उनके साथ केवल भाई की तरह या बराबरी से बैठ सकते हैं।

कान्फ्रेन्सों की उपयोगिता

कोई भी कान्फ्रेंस हमेशा या लगभग हमेशा अच्छी बात होती है। क्योंकि जो भी हो लोग एक मेज के चारों ओर एकत्रित होकर किसी विषय पर बातचीत करते हैं और यद्यपि वे हमेशा ही समस्या का हल ढूँढ़ने में कामयाब नहीं हो पाते फिर भी प्रयास करना ही खुद एक महत्वपूर्ण बात है।

भविष्य की आशा

मैं न केवल युद्ध का बल्कि दूसरे संकटों का भी उल्लेख कर रहा हूँ। वे हैं– विद्वेष, कड़वाहट और संघर्ष। मेरे ख्याल से वे प्रत्यक्ष युद्ध से कहीं ज़्यादा भयानक होते हैं। यह इसलिए कि उनकी वज़ह से मनुष्य का अधः पतन होता है। वे हमें निराशा की गहरी खाई में ढकेलते हैं। हमें अधिक संकुचित बनाते हैं। मेरा मूलभूत विश्वास है कि जिस तरह विज्ञान में प्रत्येक कारण का अपना परिणाम होता है– उसी तरह मानवी संबंध में – चाहे वह राष्ट्रीय अथवा अंतरराष्ट्रीय क्यों न हो – हमारी हर क्रिया, हर विचार का एक परिणाम होता है। चाहे वह कोई छोटी सी बात हो, किन्तु चाहे हमारा उद्देश्य कुछ भी हो, यदि हमारी क्रिया या विचार असत् प्रवृत्ति के हों तो उनका परिणाम भी दुष्ट प्रवृत्ति का निकलता है।

मौत के सौदागर

अब शांति दूर जाता एक धुंधला सा सपना नज़र आती है और मानव जाति स्पष्टतः सर्वनाश की ओर जाती हुई नज़र आ रही है क्योंकि अणु बम विश्व का विस्फोट करने के लिए आ गया है। फिर भी ऐसा एक भी बम नहीं है जिसने हमारे

राजनीतिज्ञ तथा समाज के कर्णधारों के दिलो-दिमाग को स्पर्श किया हो। वे अपनी पुरानी घिसीपिटी सीढ़ियों से बाहर निकल ही नहीं सकते। वे अब भी अपनी पुरानी दुनिया को बचाकर रखना चाहते हैं। हमने अपनी स्वाधीनता तथा आनेवाले नये विश्व के बारे में बहुत कुछ सुना है परन्तु मनुष्य जाति को केवल एक ही स्वाधीनता मिलने की संभावना है– वह है मौत और टुकड़े-टुकड़े हो जाने की। किस लिए यह सब हो रहा है? लोकतांत्रिक पद्धति, स्वतंत्रता और चार प्रकार की स्वाधीनता की रक्षा करने के लिए....

यह कोई नहीं बतला सकता कि आनेवाले समय में क्या पागलपन और मौत ही मानव की नियति है या इससे कुछ बेहतर है। लेकिन यह निश्चित है कि अणु बम का रास्ता शांति और स्वाधीनता का मार्ग नहीं है।

संयुक्त राष्ट्र संघ

संयुक्त राष्ट्र संघ हमारी आशाओं का, हमारी उम्मीदों का प्रमुख भंडार है क्योंकि सुरक्षा तथा लोक कल्याणार्थ यह अधिक परिणामकारक तथा आपसी अंतरराष्ट्रीय सहयोग का संगठन है। इसने अपने आपको शांति, स्वाधीनता तथा न्याय के लिए समर्पित किया है। संपूर्ण मानव जाति की उत्कट आकांक्षाओं को मूर्त रूप देने वाले उदात्त आदर्श लेकर संयुक्त राष्ट्र संघ हमारे सामने अवतीर्ण हुआ है। यह हमें इस तनाव तथा भावपूर्ण झगड़े-फसादों से ग्रस्त दुनिया से दूर ले जाने में यशस्वी होगा और हमें एक अधिक सुस्थिर भविष्य की ओर ले जाने में कामयाब होगा। उस भविष्य की ओर जिस में विज्ञान की तथा शिल्प विद्या की सारी शक्ति संपूर्ण मानव जाति के कल्याणार्थ लगाई जा सकेगी।

विश्व शांति

हमें उन्नति तथा विकास के लिए न केवल भारत में शांति की आवश्यकता है अपितु संपूर्ण विश्व के लिए शांति एक अत्यावश्यक तथा महत्वपूर्ण बात है। इस शांति की रक्षा कैसे की जाय? हमलावर के सामने आत्मसमर्पण करके नहीं, न ही दुष्प्रवृत्ति, अन्यायी, दुराचारी तत्वों से समझौता करके। युद्ध की तैयारी करके भी नहीं। आक्रमणों को रोकना चाहिए, क्योंकि वह शांति को संकट में डालते हैं।

निःशस्त्रीकरण

यदि भय को दूर करना है और शांति को आश्वस्त करना है, तो निःशस्त्रीकरण आवश्यक है।

सह अस्तित्व अथवा सह सर्वनाश

सह- अस्तित्व का केवल एक ही विकल्प है – वह है सह-सर्वनाश।

मेरा जीवन-दर्शन

जीवन की समस्याओं की ओर देखने का मेरा दृष्टिकोण पहले से ही आम तौर पर वैज्ञानिक था। उसमें उन्नीसवीं सदी का तथा बीसवीं सदी के प्रारंभ काल के विज्ञान का कुछ सरल सुबोध आशावाद था। मेरे सुरक्षित तथा आरामदायी जीवन

तथा जो उत्साह और आत्मविश्वास मुझ में था, इन सब ने इस आशावादी भावना को बढ़ावा दिया। एक प्रकार का मानववाद मुझे पसंद था।

धर्म का, चाहे वह हिंदू धर्म हो या मुस्लिम, बौद्ध धर्म हो या ईसाई, जिस प्रकार से पालन किया जा रहा था, बड़े-बड़े विचारवानों ने भी उसे जिस प्रकार से स्वीकार किया था, उस धर्म का मुझे तो कोई आकर्षण नहीं था। धर्म का संबंध भ्रामक कल्पनाओं तथा दुराग्रही अंध विश्वासों के साथ जोड़ा गया था, उसमें जीवन की समस्याओं को हल करने का जो तरीका बताया गया था वह तो निश्चित ही वैज्ञानिक ढंग का नहीं था। उसके चारों ओर जादुई चमत्कार का इन्द्रजाल बिछाया गया था और थी तर्क विहीन अंधश्रद्धा।

बुनियादी बात यह है कि मेरी रुचि इसी दुनिया में, इसी जीवन में है न कि किसी और दुनिया में या किसी और जीवन के बाद के जीवन में। मैं नहीं जानता कि आत्मा नाम की कोई चीज अस्तित्व में है या नहीं या मृत्यु के बाद जीवन का कोई अस्तित्व है या नहीं। ये प्रश्न महत्वपूर्ण होंगे परन्तु मेरी इनमें कोई रुचि नहीं। जिस माहौल में मेरी परवरिश हुई वहाँ आत्मा और परलोक, कर्म का सिद्धान्त, पुनर्जन्म इत्यादि में मान्यता चली आ रही थी। मुझ पर इन बातों का असर होना स्वाभाविक था और मेरा मन इन कल्पनाओं के प्रति आकर्षित भी रहा है। हो सकता है, शरीर की मृत्यु के पश्चात् आत्मा नामक कोई चीज अस्तित्व में रहती हो, कर्म का सिद्धान्त जीवन को नियंत्रित करता हो। फिर भी मनुष्य जब चरम शक्ति के संबंध में विचार करता है, तो इस सिद्धान्त के कारण कुछ स्पष्ट कठिनाइयाँ नज़र आती हैं। आत्मा को मानते हुए पुनर्जन्म का सिद्धान्त भी तर्कसंगत लगता है।

किन्तु धार्मिक श्रद्धा के रूप में मैं इनमें से एक भी सिद्धान्त और कल्पना पर विश्वास नहीं करता। ये कल्पनाएँ केवल किसी अज्ञात प्रदेश–– जिसके बारे में हम कुछ नहीं जानते–– के संबंध में विचारणीय बुद्धिवादी अनुमान मात्र हैं। उनका मेरे जीवन पर रत्तीभर भी प्रभाव नहीं पड़ता और बाद में वे सही या गलत सिद्ध भी क्यों न हों – उनसे मुझे कोई अंतर नहीं पड़ता।

मेरे लिए असली समस्याएँ हैं व्यक्ति और सामाजिक जीवन की समस्याएँ। ये समस्याएँ हैं– संतुलित शांत जीवन, व्यक्ति के अन्तर्वाह्य जीवन में एक उचित संतुलन, समूह और व्यक्ति के संबंधों में सामंजस्य और कुछ अधिक अच्छे तथा उच्च बनने की इच्छा। सामाजिक विकास की तथा मानव के अखंड साहसी कारनामों की समस्याओं का समाधान करने के लिए आवश्यक है निरीक्षण

पद्धति, असंदिग्ध ज्ञान, विचारपूर्ण तर्क पद्धति, वैज्ञानिक पद्धति के अनुसरण की। हो सकता है यह पद्धति सत्य की खोज में हमेशा लागू ना हो सके क्योंकि लगता है, कला, काव्य और कुछ मानसिक अनुभव कुछ भिन्न पद्धति की बातें हैं। विज्ञान की वस्तु निष्ठ पद्धति से बाहर जो भी हो, एक जीवित दर्शन को जवाब देना है आज के सवालों का, आज की समस्याओं के समाधान का।

फिर भी मुझे विश्वास है कि इतिहास की लम्बी विशाल यात्रा में वैज्ञानिक पद्धति तथा वैज्ञानिक मार्ग द्वारा किसी अन्य मार्ग की अपेक्षा मानवी जीवन में अधिक क्रांति लाई गई है। वैज्ञानिक पद्धति ने अनेक प्रवेश द्वार खोले हैं और वह अधिक मूलभूत परिवर्तन ले कर आई है जिससे प्राचीन काल में जिसे अज्ञात समझा जाता था, उसके प्रवेश द्वार तक हम आ गए हैं।

भविष्य अनिश्चित अंधकारमय है, लेकिन हमें उसकी ओर जाने वाले मार्ग का कुछ हिस्सा नज़र आ रहा है और हम मज़बूत कदमों के साथ उस मार्ग पर चल सकते हैं। उस मार्ग का अनुसरण करते समय हमें इस बात को गांठ में बांधना होगा कि मनुष्य की आत्मा, जो इतने संकटों का मुकाबला करके अडिग खड़ी है, किसी भी हालत में पराजित नहीं हो सकती। हमें यह भी याद रखना चाहिए कि जिन्दगी, सब बुराइयों के होते हुए भी, हर्ष और सौंदर्य से भरी है और हम हमेशा प्रकृति के जादू भरे जंगलों में घूम सकते हैं। हाँ इस जादू भरी प्रकृति में घूमने का तौर तरीका आना चाहिए।

व्यक्ति और भाग्य की तरंग

हर व्यक्ति अपने से ऊपर उठने की क्षमता रखता है। अगर वह चाहे तो वह स्वर्ग एवं नरक की हवाओं के झोंकों को चार दीवारों से बाँध सकता है। ऐसा करने से वह भाग्य को प्रभावित कर सकता है, उसे मोड़ सकता है।

महानता

महानता दृष्टि, सहिष्णुता, करुणा और सुख-दुख में समभाव बनाए रखने वाली मनःस्थिति से उपजती है।

सफलता के लिए चरित्र की अपेक्षा होती है

सफलता के लिए अपेक्षित है चरित्र, अनुशासन, संगठित प्रयत्न और महत उद्देश्य हेतु आत्मोत्सर्ग।

साहस और स्वाभिमान

केवल एक चीज़ हमसे कोई नहीं छीन सकता और वह है साहस और स्वाभिमान के साथ आचरण करना, इज्जत के साथ रहना और उन आदर्शों को आत्मसात करना जो हमारा जीवन सार्थक बनाते हैं।

सुख

सुख मन की एक अन्तःस्थिति है।

यहाँ आलसियों का क्या काम

जहन्नुम में जाएँ वे लोग जो तेज़ नहीं चल सकते। अच्छा हो वे अपने आप ही अलग हो जायें। हमें आलसी, सुस्त, कामचोर लोगों की ज़रूरत नहीं है। मुझे चाहिए काम और काम और काम ····

साहसी बनो

शूर, साहसी बनो ... फिर देखो आगे आगे होता है क्या।

एक महान् उद्देश्य के साथ गठबंधन

किसी महान उद्देश्य के साथ गठबंधन करना ही जीवन का सच्चा आनंद है। उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अपने आपको, अपने तुच्छ जीवन को भूलकर, उद्देश्य से मन लगाने में ही सच्चा सुख है।

हर दिन नया दिन

हमारे लिए हर दिन, हर पल एक नया प्रारंभ है।

भारतीय युवकों की भूमिका

यदि आप वर्तमान स्थिति से असंतुष्ट नहीं हैं, अगर आप में मन को बेचैन करनेवाली, अस्थिर करने वाली बलवती चाह नहीं है तो फिर आप में और उन बूढ़ों में अंतर ही क्या है जो केवल बातें बनाते हैं। यह उनके लिए नहीं जो सतत सुरक्षा की खोज में रहते हैं और एक भगवान की स्थापना करते हैं। यह उनके लिए भी नहीं जो योग्यता अयोग्यता, उचित अनुचित का विचार करके उन्नति करते हैं। अपने हिस्से से अधिक ऐहिक ऐश्वर्य जिन्हें प्राप्त हुआ है, ऐसे खुशनसीब, चमकदमक वाले लोग भी सुधार कार्य की ओर नहीं आते। दुनिया में परिवर्तन तथा उन्नति वे लोग लाते हैं जो असंतुष्ट होते हैं और जो अत्याचार तथा अन्याय सहन करने से इन्कार करते हैं।

इसीलिए जहाँ तक संभव हो मैं अपनी विचारधारा को सुस्पष्ट तथा दिमाग़ को उलझनों से मुक्त रखना चाहता हूँ। मेरी इच्छा है आप भी ऐसा ही कीजिए। हमारा साध्य क्या हो और हम किस तरह उसे साध सकते हैं इस विषय में जब तक हमारी विचारधारा सुस्पष्ट नहीं होगी तब तक आजकल के राजनीतिक नारों का चर्बण करने से कुछ भी हाथ नहीं लगेगा।

मेरी दिलचस्पी इसी बात में है कि आपमें दुनिया की वर्तमान स्थिति को परखने की सामर्थ्य, उसे सुधारने की उत्कट इच्छा तथा इस सुधार के लिए क्या करना चाहिए, कौन सा मार्ग अपनाना चाहिए, इस बात की पूछताछ करने की प्रवृत्ति भी हो। जो मैं कहता हूँ अगर आप उसे गलत समझते हैं तो उसे अस्वीकार कर दीजिए। साथ ही उन सारी बातों को भी अस्वीकार कर दीजिए जिन्हें आप का विवेक गलत मानता हो भले ही उन्हें परंपरा से पवित्र माना गया हो, या उन्हें धार्मिक स्वीकृति मिली हो। क्योंकि चीनी कथन के अनुसार ''धर्म अनेक हैं किन्तु सत्य एक है।''

यह कैसे हो सकता है कि, ब्रह्मा ने स्वयं विश्व की रचना की और उसे दयनीय बना दिया? अगर वह सर्वशक्तिमान है फिर भी ऐसा करता है तो वह अच्छा नहीं है। और यदि वह सर्वशक्तिमान नहीं है, तो वह भगवान नहीं है।

भारत में सबसे अधिक विस्मयकारी और भयंकर चीज़ है उसकी ग़रीबी। यह कोई दैवी विधान नहीं, न ही समाज की अपरिहार्य स्थिति है। अगर विदेशी सरकार और स्वयं भारत की अपनी कुछ संतानें सारी अच्छी चीज़ें हड़प न लेतीं

...नों समस्त संतान

... ...कुछ है या हो सकता है। रास्कन का कहना है, "ग़रीबी ग़रीब की सहजहीनता के कारण या ईश्वर के अतर्क्य गूढ़ कानूनों के कारण अथवा शराब के कारण नहीं आती, वह आती है जब दूसरे लोग उनकी जेबें काट लेते हैं।" सम्पत्ति पर कुछ विशिष्ट लोगों के नियंत्रण का अर्थ अधिकांश लोगों की असंतुष्टि तक ही सीमित नहीं। वह मनुष्य के मन पर अपनी शक्ति का ऐसा प्रयोग करता है कि उनके मन में स्वाधीनता की इच्छा ही नहीं जागती। यही मानसिक दृष्टिकोण निर्धनों को शक्तिहीन करता है। पराजय की भावना की इस प्रवृत्ति के विरुद्ध हमें लड़ना है।

ज़रा नीचे गहराई तक नज़र डालिए, लाखों लोग खेतों या कारखानों में अथक परिश्रम कर रहे हैं। भारत की सरहदों के पार भी एक नज़र डालिए– जहाँ आपके जैसे ही लोग आपकी तरह की समस्याओं का सामना कर रहे हैं। आप की प्राचीन मातृभूमि की संतानें उसकी स्वाधीनता के लिए खून बहा रही हैं। अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण अपनाइए, राष्ट्रीयता से मुक्त, सीमाहीन और सरहदों से परे अंतरराष्ट्रीय युवा गणतंत्र के सभासद बनिए, जो विश्व को अन्याय तथा गुलामी से मुक्त करने के लिए जमीन आसमान एक कर रहा है।

हममें से कोई मृत्यु को टाल नहीं सकता किंतु कम से कम युवकों को उसका विचार नहीं करना चाहिए। वृद्ध उतनी ही अवधि के लिए काम करते हैं जितनी उनके लिए शेष है, किंतु युवक शाश्वत काल के लिए काम करते हैं। उनका कार्य सनातन है।

भारत और उसके लोग

यदि भारत की मृत्यु हो गई, तो कौन जीवित रहेगा? यदि भारत जीवित रहा तो कौन मरेगा?